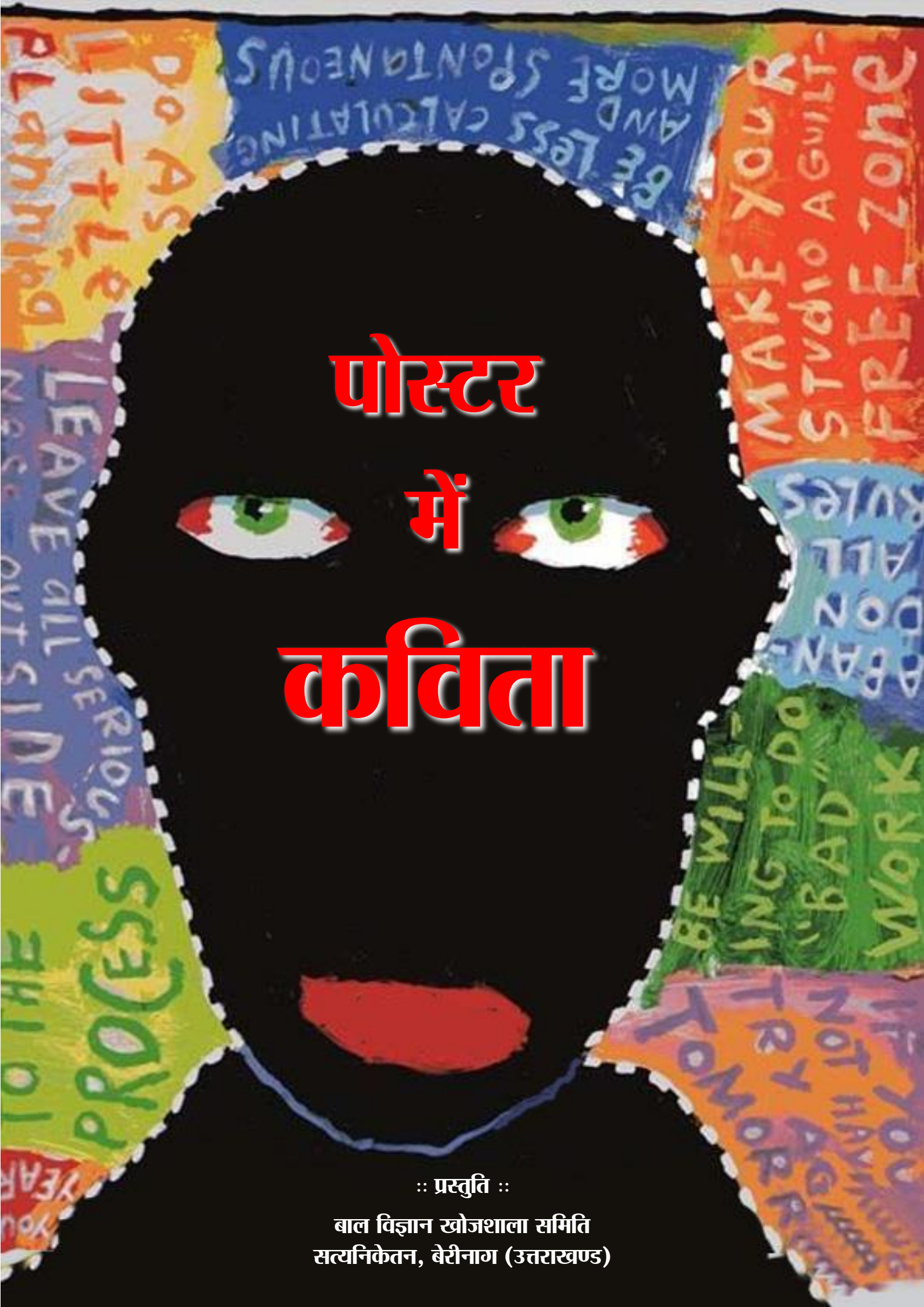

पोस्टर में कविता

:: प्रस्तुति ::

बाल विज्ञान खोजशाला समिति
सत्यनिकेतन, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

अन्धे का सपना

मैं एक अन्धे का सपना हूँ

एक रंग का दुःस्वप्न
एक रोशनी मेरे दरवाज़े पर
दस्तक देते-देते थक जाती है
जो आकार मेरे भीतर भटकते हैं वे आवाज़ों के हैं
जो तस्वीरें बनतीं-बिगड़ती हैं वे स्पर्शों की हैं

मेरी स्मृतियाँ सूखे कुएँ से आतीं प्रतिध्वनियाँ हैं
वे खंडहरों में लिखे हुए नाम हैं
जिनका किसी और के लिए कोई अर्थ नहीं है

मेरे भीतर जो नदी बहती है
वह एक आवाज़ की नदी है
और मेरी हथेलियों में जो गीलापन उसे छूने से लगता है
वही पानी की परिभाषा है

मेरी ज़मीन पर एक छड़ी के टकराने की ध्वनि है
जो किसी जंगल में मुझे भटकने नहीं देती।

● आशुतोष दुबे

कविता पोस्टरः बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)
The dream of a blind man Drawing by Ashi Feldman

एक आदमी होता था

पहले एक गौरैया होती थी
एक आदमी होता था
लेकिन आदमी इतना ऊँचा उड़ा
कि गौरैया खो गई!

पहले एक पहाड़ होता था
एक आदमी होता था
लेकिन आदमी ऐसे तन कर खड़ा
कि पहाड़ ढह गया!

पहले एक नदी होती थी
एक आदमी होता था
लेकिन आदमी ऐसे वेग से बहा
कि नदी सो गई!

पहले एक पेड़ होता था
एक आदमी होता था
लेकिन आदमी ऐसे ज़ोर से झूमा
कि पेड़ सूख गया!

पहले एक पृथ्वी होती थी
एक आदमी होता था
लेकिन आदमी इतने ज़ोर से घूमा
कि पृथ्वी रो पड़ी!

.... पहले एक आदमी होता था.

• अजेय

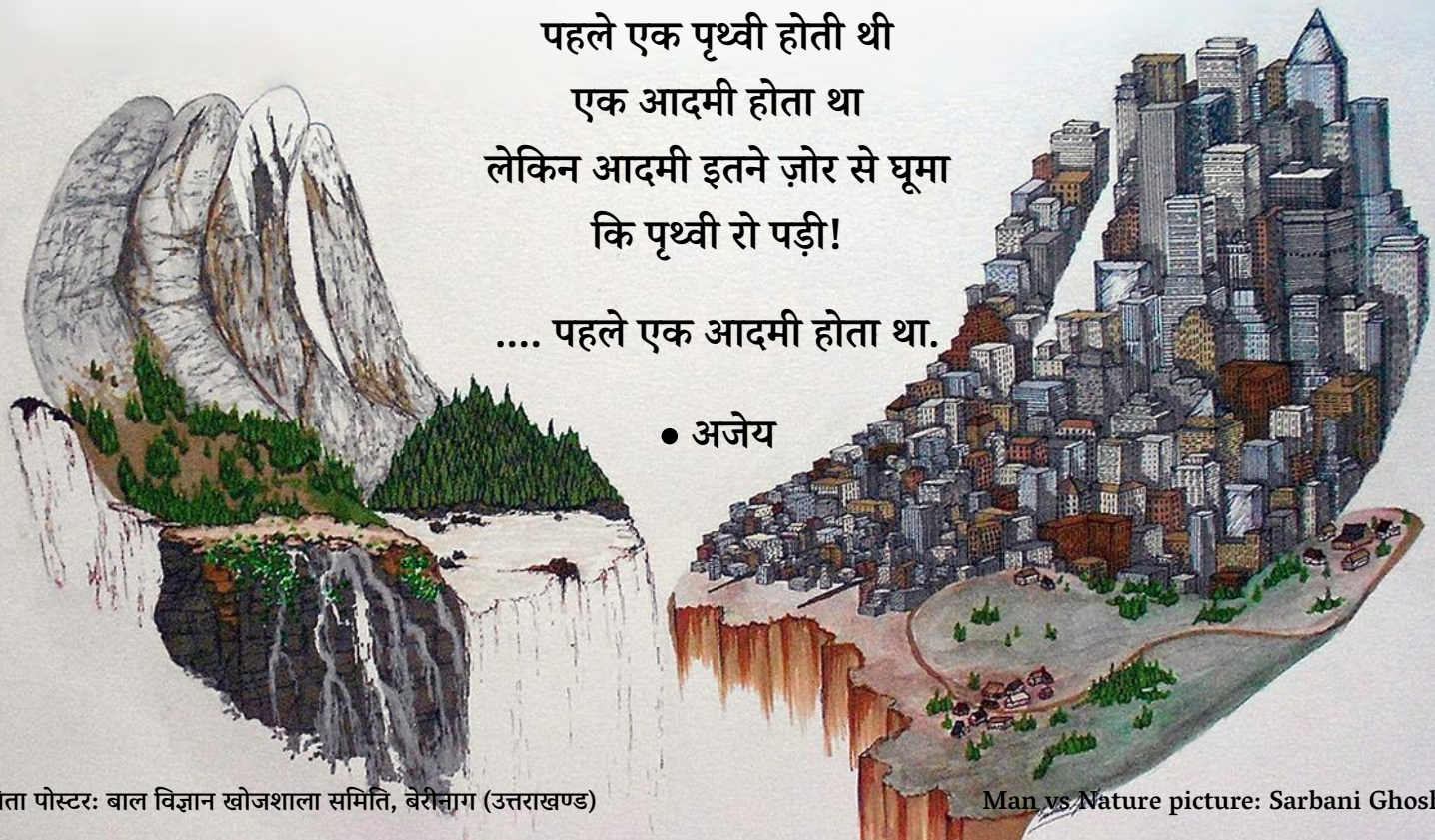

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

Man vs Nature picture: Sarbani Ghosh

कहो नहीं करके दिखलाओ

कहो नहीं करके दिखलाओ
उपदेशों से काम न होगा
जो उपदिष्ट वही अपनाओ
कहो नहीं, करके दिखलाओ।

अंधकार है! अंधकार है!
क्या होगा कहते रहने से,
दूर न होगा अंधकार वह
निष्क्रिय रहने से सहने से
अंधकार यदि दूर भगाना
कहो नहीं तुम दीप जलाओ
कहो नहीं, करके दिखलाओ।

यह लोकोक्ति सुनी ही होगी
स्वर्ग देखने, मरना होगा
बात तभी मानी जाएगी
स्वयं आचरण करना होगा
पहले सीखो सबक स्वयं
फिर और किसी को सबक सिखाओ।
कहो नहीं, करके दिखलाओ।

कर्म, कर्म के लिए प्रेरणा
होते हैं उपदेश निरर्थक
साधु वृत्ति से मन को माँजो
साधु वेश परिवेश निरर्थक।
दुनिया भली बनेगी पीछे
पहले खुद को भला बनाओ।
कहो नहीं, करके दिखलाओ।

कथनी है वाचाल कहाती
करनी रहती सदा मौन है,
मौन स्वयं अभिव्यक्ति सबल है
इसे जानता नहीं कौन है।
नहीं सहारा लो कथनी का,
करनी से ही सब समझाओ।
कहो नहीं, करके दिखलाओ।

• श्रीकृष्ण सरल

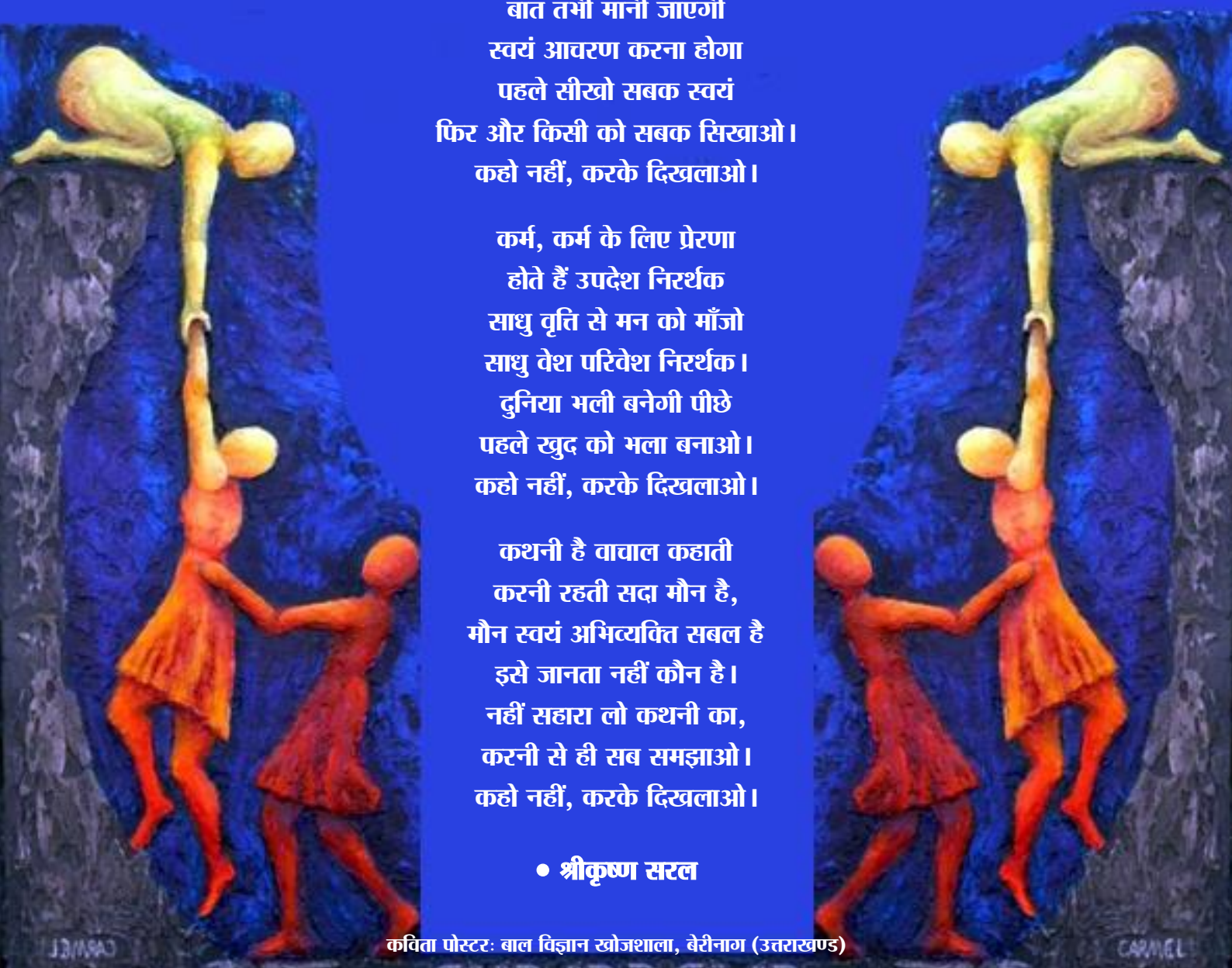

कविता पोस्टरः बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

अगर

आदमी रो सकता
तो अपनी मौत पर सबसे ज़्यादा रोता
पर अगर वह ऐसा नहीं करता
तो बहुत शुबहा है
कि उसे अब तक कोई इल्म नहीं हो सका है
कि वह कितना मर चुका है अब तक
और कितना बकाया है।

• आशुतोष दुबे

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

अच्छे बच्चे

कुछ बच्चे बहुत अच्छे होते हैं
वे गेंद और ग़ुब्बारे नहीं मांगते
मिठाई नहीं मांगते ज़िद नहीं करते
और मचलते तो हैं ही नहीं

बड़ों का कहना मानते हैं
वे छोटों का भी कहना मानते हैं
इतने अच्छे होते हैं

इतने अच्छे बच्चों की तलाश में रहते हैं हम
और मिलते ही
उन्हें ले आते हैं घर
अक्सर
तीस रुपये महीने और खाने पर।

• **नरेश सक्सेना**

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

अमर कहानी

न उस राजा के कारण
न पारदर्शी पोशाक के कारण
न उस पोशाक के दर्ज़ी के कारण
न चापलूस मंत्रियों के कारण
न डरपोक दरबारियों के कारण

कहानी अमर हुई बस
उस बच्चे के कारण
जिसने कहा – राजा नंगा है!

● महेश पुनेठा

आँख का पानी न मरने पाए

रहे पानी आँख में
चाहे और जो हो जाए
आँख का पानी न मरने पाए

मेघ का क्या
कल इधर आये-न-आये
बरसे बिना केवल गरजकर लौट जाए
या कहीं
गुपचुप किसी अनजान के घर
और के आँगन बरसकर लौट जाए,

भरोसा इसलिए कर सिर्फ़ अपनी
आँख का
भावना का ज्वार भी यदि उमड़ आए
कसकर दबा ले होंठ
पुतलियाँ कर बंद
एक भी ना बूँद बाहर आए।

आँख का पानी न मरने पाए
चाहे और जो हो जाए।

• सुरेश पन्त

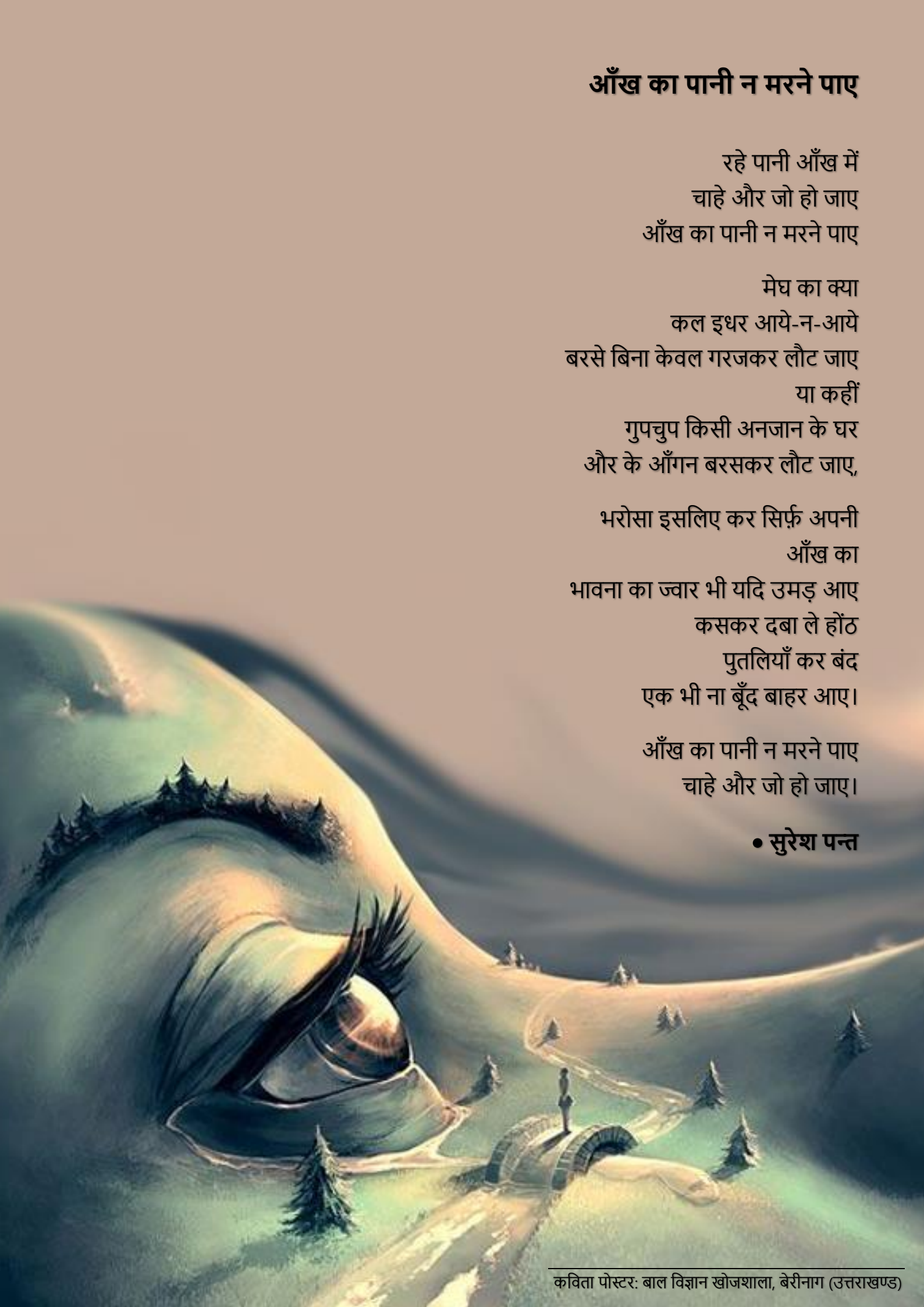

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

आना

आना
जब समय मिले
जब समय न मिले
तब भी आना
जैसे हाथों में
आता है जाँगर
जैसे धमनियों में
आता है रक्त
जैसे चूल्हों में
धीरे-धीरे आती है आँच
आना

आना
जैसे बारिश के बाद
बबूल में आ जाते हैं
नये नये काँटे
दिनों को चीरते-फाड़ते
और वादों की धज्जियाँ उड़ाते हुए

आना
जैसे मंगल के बाद
चला आता है बुध
आना

(केदार नाथ सिंह)

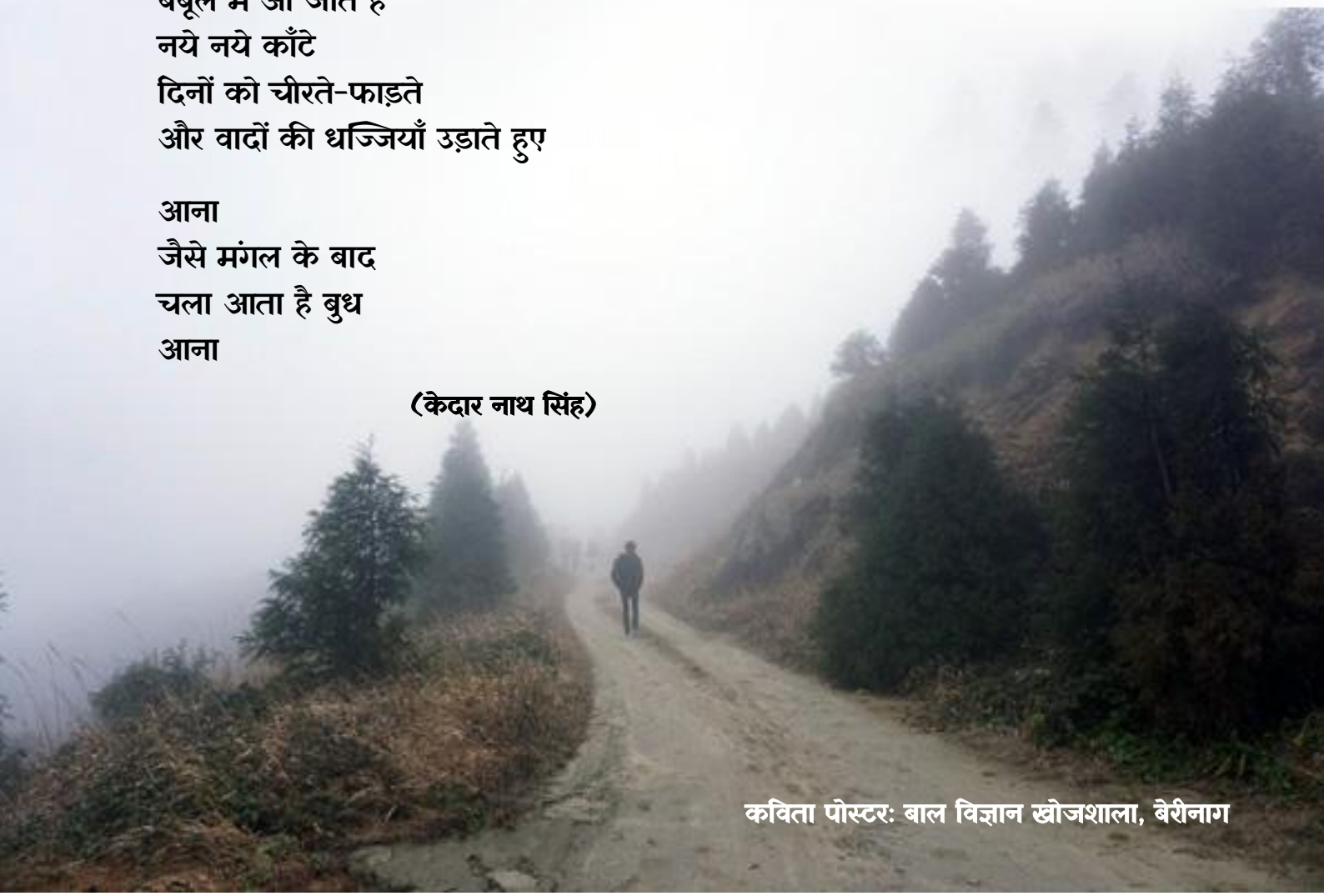

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग

इल्तिजा [1]

हमारे साथ हमारी थोड़ी बदनसीबी भी चली आई थी
आपका भला क्या दोष!
कुछ बस्तियाँ ख़ाक में मिल जाएँ
आपका ग़ुस्सा ठंडा हो
कुछ नौजवानों की ज़िन्दगियाँ बर्बाद हो जाएँ
आपका ग़ुस्सा ठंडा हो
यह ऐतिहासिक महायज्ञ सम्पन्न हो
आपका ग़ुस्सा ठंडा हो

हमारे क़ातिल!
हमारे दिलदार!
अब जीने की नहीं
मरने की रुख़्सत चाहते हैं
कोई ख़्वाहिश नहीं, कोई शिकवा नहीं
बस इतनी इल्तिजा है आपसे
हमारी क़ब्रों में ही
अपने ख़ंजर भी दफ़्न कर दीजिएगा।

● अदनान कफ़ील दरवेश
'नीली बयाज़' संग्रह से

[1] विनती

इस बारिश में

जिसके पास चली गई मेरी ज़मीन
उसी के पास अब मेरी
बारिश भी चली गई

अब जो घिरती हैं काली घटाएँ
उसी के लिए घिरती है
कूकती हैं कोयलें उसी के लिए
उसी के लिए उठती है
धरती के सीने से सोंधी सुगन्ध

अब नहीं मेरे लिए
हल नही बैल नही
खेतों की गैल नहीं
एक हरी बूँद नहीं
तोते नहीं, ताल नहीं, नदी नहीं, आर्द्रा नक्षत्र नहीं,
कजरी मल्हार नहीं मेरे लिए

जिसकी नहीं कोई ज़मीन
उसका नहीं कोई आसमान ।

• नरेश सक्सेना

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

इससे पहले कि नदियों के पाट खत्म
हो जाएं
ओरा जाएं सारे जंगल
सिरा जाये तितली, फूल, तारों के कितने क़िस्से
हवा अंधड़ में बदल जाए
बारिश होना भी लगभग बंद हो जाए
हमें एक बार मिल लेना चाहिए

कहीं भी मिल लेना चाहिए
जहाँ से दिखती रहे थोड़ी हरियाली थोड़ा आकाश
और ओझल रहें घृणा की तरेरती नज़रें

इतनी तेज़ी से इतनी सुंदरता नष्ट की जा रही है यहाँ कि
मैं बचे हुए को जी लेने के लिए बेचैन हो उठी हूँ

मैं ख़यालों में रोज जमा कर रही हूँ मिट्टी, पानी और हरियाली
तुम्हारे संग-साथ के लिए इतनी चीज़ें तो चाहिए ही

तुम ही सोचो कैसा होगा हमारा अभिसार
बिना बारिश, बिना जंगल, बिना पहाड़ और नदी के
एक उजाड़, प्लास्टिक का संसार दम घोट देगा हमारा

देखना अगर इसी तरह टलता रहा हमारा मिलना
तो एकदिन प्यार किये बिना ही हम दुनिया से चले जाएंगे
और किसी को कोई फ़र्क नहीं पड़ेगा।

• रूपम मिश्र

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

उमर ख़ालिद

अमां मियां
बड़े कारीगर हो
एक निकम्मे मास्टर को उठा ही लाये
अपने ऊपर कविता लिखवाने
जेल ले चलोगे मुझे भी क्या?

न ऐसी तुम्हारी कोई मंशा नहीं
और दोस्त
तुम तो मुझे जानते भी नहीं
कुछ लोग मानते हैं कि तुम
मुसलमान हो इसलिए जेल में हो
अन्यथा बेल मुश्किल न होती

कुछ को लगता है
तुमने ज्यादा सच बोल दिया
और चुप नहीं हो रहे हो!
थोड़ी चुप्पी साध लेते
थोड़ा हो जाते चालाक।

अमां मियां काहे उतारू हो
निकम्मे मास्टरों, खौलती गर्मी में
अनशन पर बैठे युवाओं के भीतर
चिनगारी बोने के लिए!

सोचता हूं इतिहास तुम्हें कैसे याद करेगा
एक मुसलमान होने की सजा भुगतने वाला
नहीं इतिहास इसे सिद्ध नहीं कर पाएगा
लिखेगा भी तो लाखों नौजवान
इसके विरुद्ध गवाही दे देंगे।

मैने भगत सिंह को पढ़ा है
तुम जी रहे हो
इतिहास इसे शायद लिख न पाए
पर मिटा भी नहीं पाएगा!

इतिहास में न सही कविता में तो तुम दर्ज हो ही गए हो प्यारे
और ग़जब यह कि
दर्ज करने वालों को भी तुमसे जलन हो रही है

गांव के ताजिये में लगने वाला नारा अक्सर याद आता है
तुम्हें देखकर
हाय हसन! हम न हुए!

अरे देखो फिर मैं भूल कर बैठा आखिर ठहरा हिंदू ही
वह भी राम जी के अवध का
हां हां वही जहां सब कुछ चम्पत है
सीता माई लछिमन भइया राम लला
भरत शत्रुघ्न बैठे करत हैं विलाप!
लेकिन कोई उपमा सूझ ही नहीं रही यहां से!

हां अलबता मौलाना हसरत मोहानी
जरूर याद आ जाते हैं
करते हुए इंकलाब इंकलाब
तो क्या मैं
मुसलमान हो गया हूं!

कितने मुसलमान होते हैं तुम्हारी तरह उमर ख़ालिद
और कितने होते हैं हसरत मोहानी की तरह?
या फिर कितने हिंदू मिलेंगे तुम जैसे?
कोई शोध सके तो शोध ले
इन दोउन में खोज सके तो खोज ले?

फुसफुसा रहे थे अभी गांधी मेरे कान में
इस लड़के ने पार कर ली है सीमा रेखा
छोकरे भगत की राह पर टिक गया है अड़ियल
बचा नहीं पाऊंगा इसे
मैं इस बार भी

पर क्या गजब हुआ ठहरा
जो नहीं आया था अपनी शहादत के बाद कभी कुछ कहने
जो कुछ कहना था शहादत ने कह दिया था
गूंज उठी उसकी शांत, दृढ़, मीठी आवाज
बापू मैं तब भी नहीं मरा था
अब भी नहीं मरूँगा
तुम निसफिकिर रहो!
मजा तो तब आया जब गांधी की मूंछें फड़की,
उनके चेहरे पर उग आया सुकून

निकल गए वो गुनगुनाते हुए
कुछ अबूझ समझ में न आने वाला गीत

उमर ख़ालिद इतिहास में दर्ज होगा जब इस गीत का अर्थ
और चित्रकार भरेंगे अर्थ में रंग
तब एक तस्वीर उभरेगी ..

आने वाली पीढ़ियों के पास कोई नया मुहावरा होगा
और होगा ढेर सारा प्यार
बेशक तुम्हारे लिए! तुम्हारे ही लिए!

• दीपक सिंह

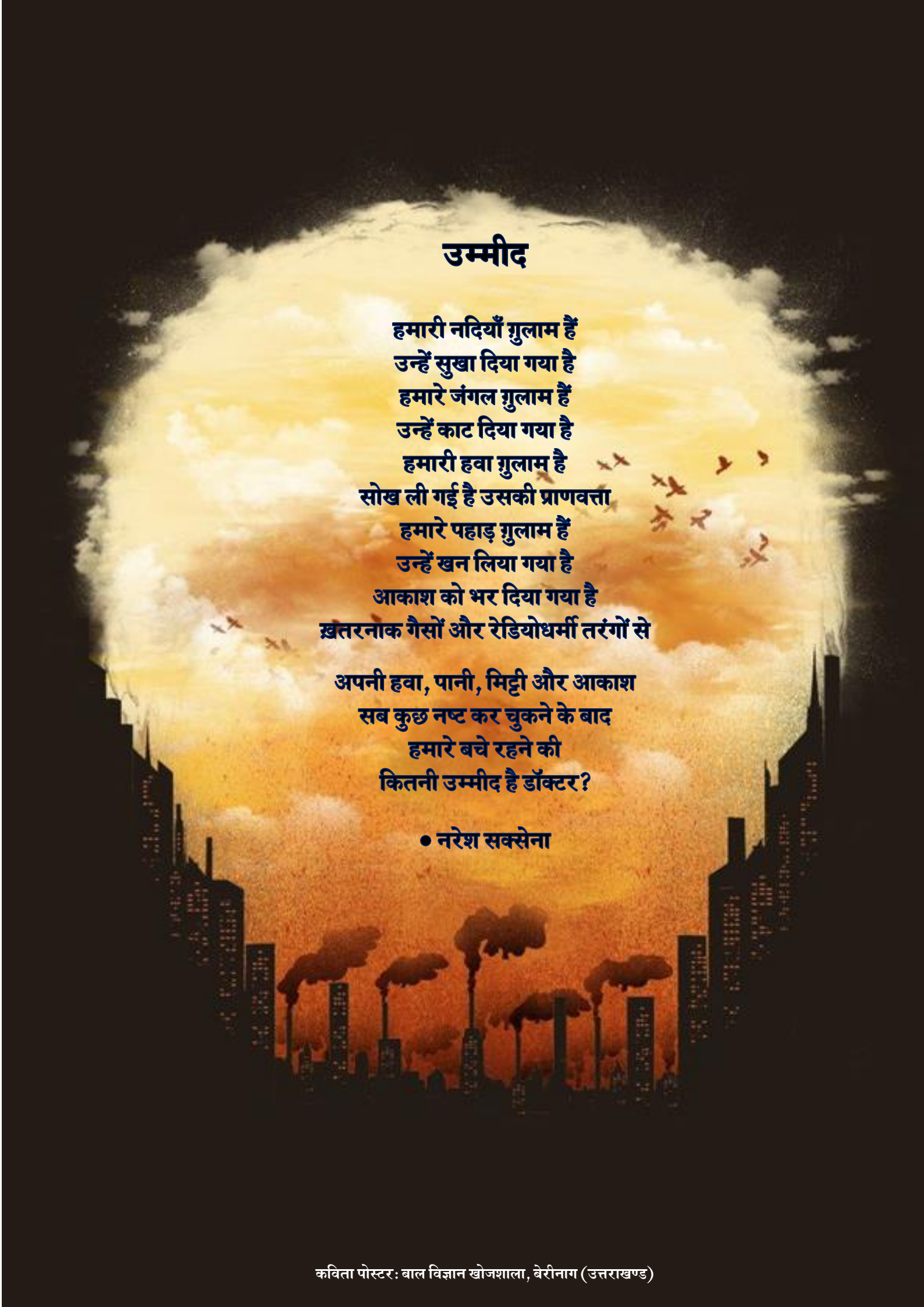

उम्मीद

हमारी नदियाँ ग़ुलाम हैं
उन्हें सुखा दिया गया है
हमारे जंगल ग़ुलाम हैं
उन्हें काट दिया गया है
हमारी हवा ग़ुलाम है
सोख ली गई है उसकी प्राणवत्ता
हमारे पहाड़ ग़ुलाम हैं
उन्हें खन लिया गया है
आकाश को भर दिया गया है
ख़तरनाक गैसों और रेडियोधर्मी तरंगों से

अपनी हवा, पानी, मिट्टी और आकाश
सब कुछ नष्ट कर चुकने के बाद
हमारे बचे रहने की
कितनी उम्मीद है डॉक्टर?

● नरेश सक्सेना

कविता पोस्टर : बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

एक दिन जब सारे मुसलमान

एक दिन जब सारे मुसलमान
इस धरती की तहों में सो जाएँगे या सुला दिए जाएँगे
दुनिया से सारे क़ुरआन उठा लिए जाएँगे या जला दिए जाएँगे
और सारी टोपियाँ अंतरिक्ष में खो जाएँगी
और दिन में पाँच बार सर पटकने वाली क़ौम फ़ना हो जाएगी
और जब आधा लखनऊ
आधा दिल्ली
आधा कानपुर
आधा बनारस
आधा पटना
आधा कलकत्ता
ख़ाली हो जाएँगे
और
सारे क़हक़हे
सारे छेड़
तमाम अहल-ए-सुख़न
और
रसूलन बुआओं
अज़ीज़न दादियों
नूरुल चाचाओं
सकीना बहनों
और सारे महमूद भाइयों से
ये दुनिया हमेशा-हमेशा के लिए ख़ाली हो जाएगी
उस दिन मेरे अज़ीज़ भाई
मेरे बच्चे
देखना
तुमने क्या खो दिया है!

• अदनान कफ़ील दरवेश

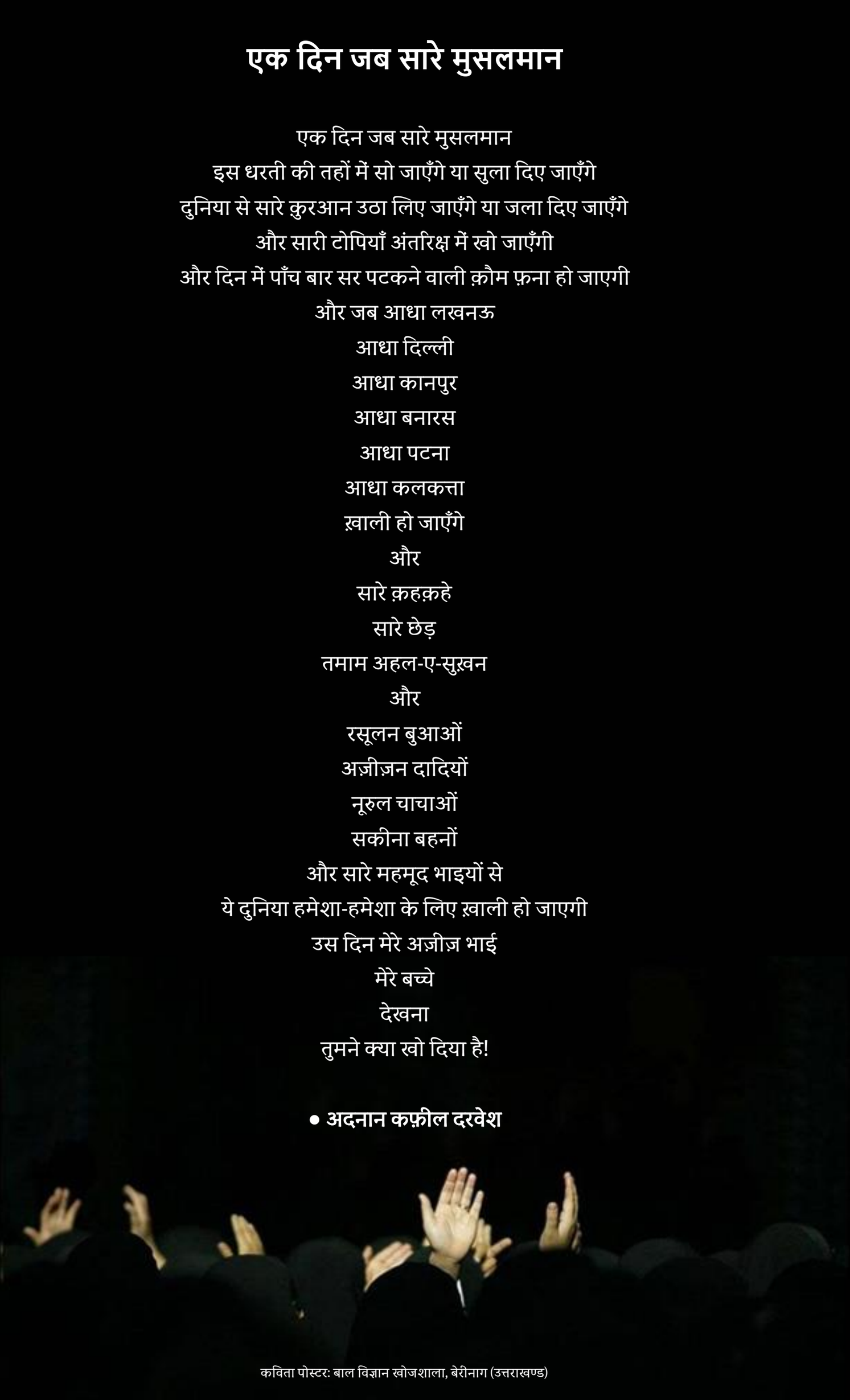

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

एक देश जिसका नाम था गीत

मैं रहता था गीत नाम के एक देश में:
गाती हुई असंख्य औरतों ने
बनाया था मुझे नागरिक,
और चारों दिशाओं के संगीतकारों ने
सुब्हो-शाम से रचे शहर मेरे लिए,
और मैं घूमता रहा अपने इस देश में
जैसे घूमता है कोई शख़्स दुनिया भर में।

मेरा देश एक गीत है,
और ज्यों ही वह ख़त्म होता है,
मैं फिर से बन जाता हूँ
एक शरणार्थी।

• नजवान दरविश (फ़िलिस्तीनी कवि)

(अनुवादः आशुतोष उपाध्याय)

कविता पोस्टरः बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

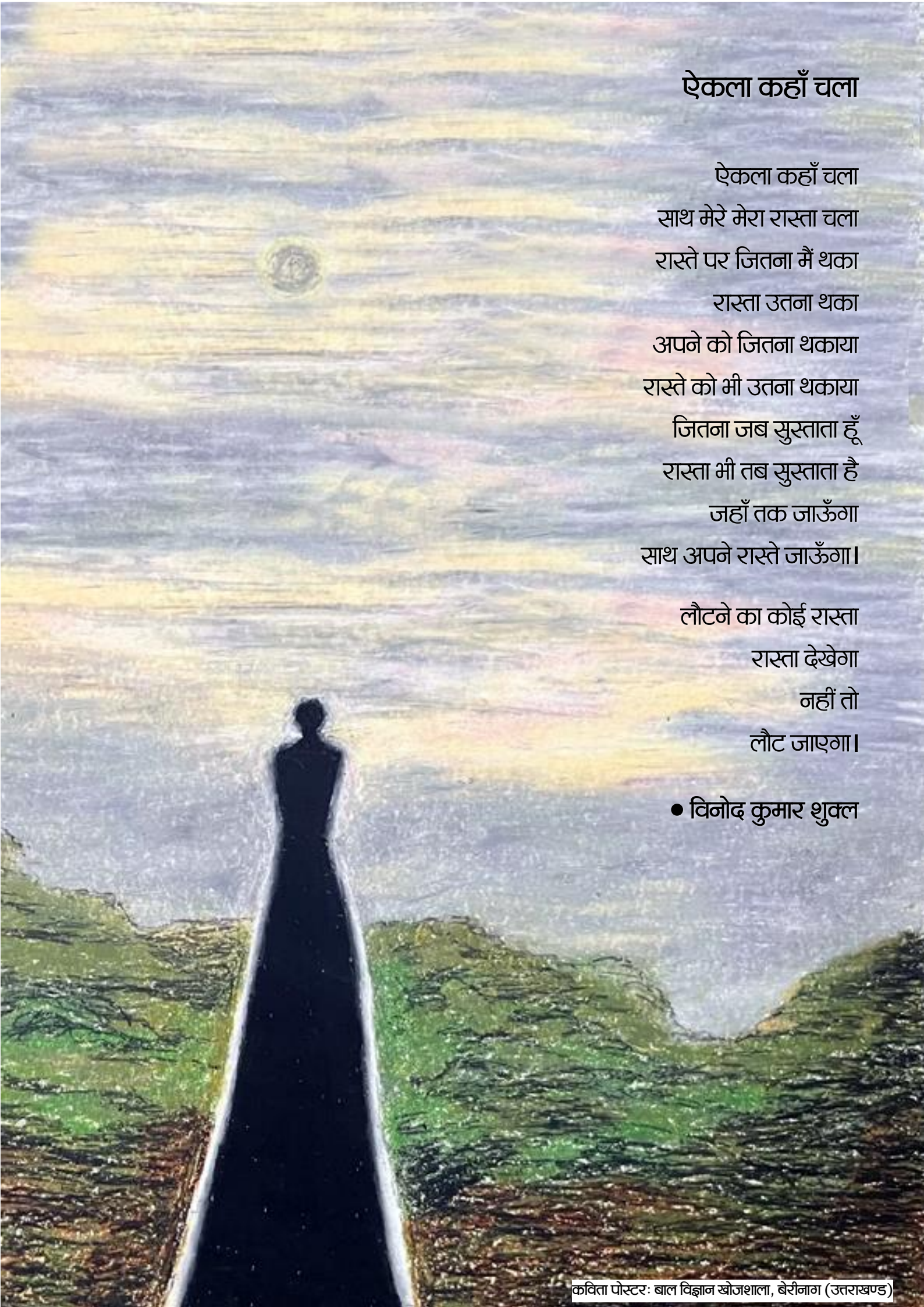

ऐकला कहाँ चला

ऐकला कहाँ चला
साथ मेरे मेरा रास्ता चला
रास्ते पर जितना मैं थका
रास्ता उतना थका
अपने को जितना थकाया
रास्ते को भी उतना थकाया
जितना जब सुस्ताता हूँ
रास्ता भी तब सुस्ताता है
जहाँ तक जाऊँगा
साथ अपने रास्ते जाऊँगा।

लौटने का कोई रास्ता
रास्ता देखेगा
नहीं तो
लौट जाएगा।

● विनोद कुमार शुक्ल

कविता पोस्टरः बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

ओट

ठोकर खाकर गिर जाए कोई
उठते ही नज़र दौड़ाता इधर-उधर
कहीं किसी ने देख तो नहीं लिया
उसका गिरना।

झाड़-पोंछकर कपड़े
नाक की सीध में
चल पड़ता है तेज़-तेज़।

किसी ओट में खड़ा होकर
जाँचता है छिले घुटने-कोहनियाँ
कहाँ-कहाँ फटे कपड़े।

गिरने वाले का चेहरा
देखने वालों को याद रह जाता है
जैसे गिरने वाले को
वह जगह सदा याद रह जाती है।

एक बार ठोकर खा चुका आदमी
संभल-संभलकर चलता है।

पर कुछ लोग
बार-बार गिरते चले जाते हैं
शर्म नहीं आती उन्हें।
धन या सत्ता की ओट में
खड़े होकर
उन्हें लगता है –
किसी ने नहीं देखा
उनका गिरना।

• महेश पुनेठा

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

कल

कल
किसी का हो सका क्या?
और अगला कल-
क्या किसी का हो सकेगा?

मुट्ठीबंद सूखी रेत-सा
है फिसलता काल
हर विकल पल को बनाता कल
आज का चल बिंदु ही अपना
है लिए कुछ साँस के पल
तो बढ़ाएँ हाथ
जिएँ हम
इन पलों के साथ,
ऐसा न हो-
कल वे बनें
फिर वही
सूने विफल पल
कल के विकल पल!
कल किसी का हो सका क्या?

• सुरेश पन्त

फ़ोटो: चंपक

कागज की नाव

चल कागज की नाव
तुझे तो जाना है उस पार।
हइया हो, हइया हो

लहरें तुमको उठा रही हैं
हर पल आगे बढ़ा रही हैं
बढ़ती चल तू नाव हमारी
मत रहना मंझधार
हइया हो, हइया हो

लहरों को कर पार तभी तो
पहुँचेगी उस पार
हइया हो, हइया हो

• सरोजिनी कुलश्रेष्ठ

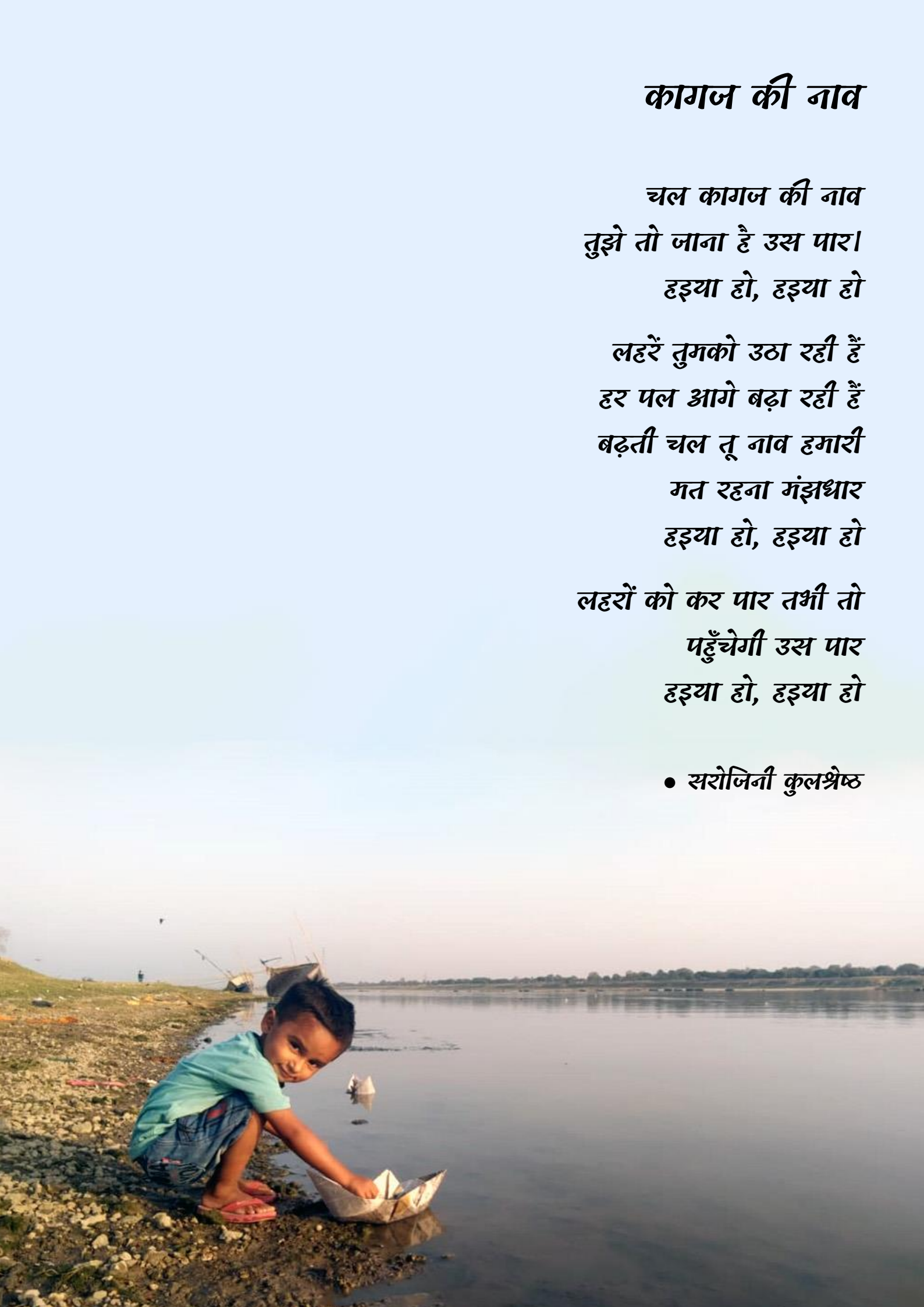

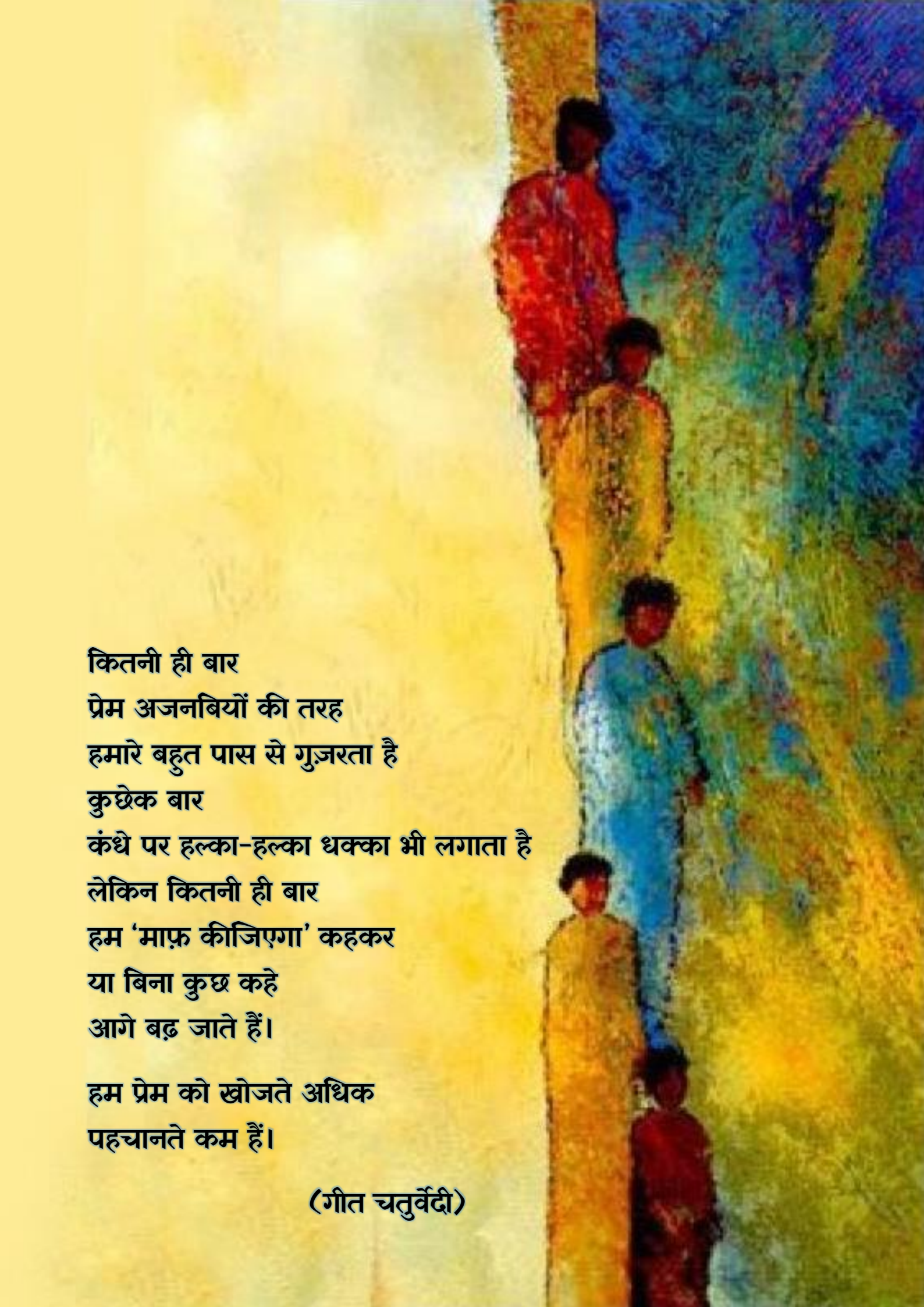

कितनी ही बार
प्रेम अजनबियों की तरह
हमारे बहुत पास से गुज़रता है
कुछेक बार
कंधे पर हल्का-हल्का धक्का भी लगाता है
लेकिन कितनी ही बार
हम 'माफ़ कीजिएगा' कहकर
या बिना कुछ कहे
आगे बढ़ जाते हैं।

हम प्रेम को खोजते अधिक
पहचानते कम हैं।

(गीत चतुर्वेदी)

कोणार्क सूर्य मंदिर

सूर्य मंदिर के भीतर इतना अंधकार
यह मंदिर सूर्योदय का है कि सूर्यास्त का?
लेकिन यहां बताने वाला कोई नहीं
सात पहियों के बावज़ूद यह रथ चलता नहीं है
पत्थर का रथ और पत्थर के पहिये!
घोड़े भी होते तो क्या पत्थर के ही होते?
लेकिन पत्थर के होते तो कहीं और
चले कैसे जाते?

रोशनी के रथों में आज भी
घोड़े नहीं, आदमी ही जोते जाते हैं
बिजली के खंभों से नहीं आती बिजली,
बिजलीघरों से भी नहीं आती वह
बहुत दूर कोयला ख़दान के नीम अंधेरे में
कोयला खनते मज़दूरों के सीने से निकलती है
जो अक्सर ख़ून की उल्टियां करते,
हांफते हुए
या धसकी हुई सुरंगों में ज़िन्दा दफ़्न होकर
मरते हैं

कोणार्क में इन दिनों सैकड़ों कारीगर लगे हैं
मंदिर की मरम्मत में
लेकिन सब जानते हैं यह रथ चलने वाला नहीं है
चलने के लिए इसे शायद बनाया ही नहीं था
आर्यभट के सिद्धांत को सिद्ध करने
जिसने कहा था कि सूर्य नहीं
पृथ्वी भ्रमण करती है

सोचता हूं, सूर्य का
आकाश जैसा विशाल और भव्य मंदिर होते हुए
इसे बनाने का विचार किसी को आया ही क्यों,
लेकिन यहां बताने वाला कोई नहीं।

● नरेश सक्सेना

कविता पोस्टर:
बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

कोरस गायिका

उसकी आवाज़ में कोई गीत नहीं है
पर अनेक गीतों में उसकी आवाज़ है

बहुत-सी आवाज़ों में खोई हुई आवाज़
लता बाई की आवाज़ के ठीक पीछे
वायलिन के इस टुकड़े की उँगली थामे
शुरुआत में बीच में अंत में

किसी को पता नहीं है
पर उसे पता है
स्वरों की इस नदी में
उसकी आवाज़ भी कहीं बह रही है

वह ठीक-ठीक याद कर पाती है
कितनी सुबह लोकल ट्रेन पकड़ी थी उसने
रेकॉर्डिंग के दिन
फिर किस तरह स्टूडियो पहुँची
भागते दौड़ते
साज़िंदों की जमावट
रिहर्सल के घंटे
लता बाई का आना

आख़िरकार रेकॉर्डिंग
और फिर लौटना थक कर
(पैसों के लिए एक बार फिर जाना पड़ा था)
लेकिन वह धुन चली आती थी
इनाम की तरह
चक्कर काटती हुई दिमाग़ में
उसे लग जाता था गाना चलेगा

और चला गाना ख़ूब चला
अभी भी लोग ढूँढ़ कर सुनते हैं
दादा ने क्या ट्यून बनाई थी
और लता बाई की उस वक़्त की आवाज़!
कोरस में उभरते और अस्त होते हुए

वहीं कहीं उसकी आवाज़ भी है
गुँथी हुई अनेक आवाज़ों में

एक मौजूद लापता बेचेहरा आवाज़
जिसे इतने सालों बाद
वह ढूँढ़ने की कोशिश करती है
और ढूँढ़ नहीं पाती

• **आशुतोष दुबे**

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

कौन जात हो भाई?

बच्चा लाल 'उन्मेष'

कौन जात हो भाई?
“दलित हैं साब!”
नहीं मतलब किसमें आते हो?
आपकी गाली में आते हैं
गंदी नाली में आते हैं
और अलग की हुई थाली में आते हैं साब!
मुझे लगा हिंदू में आते हो!
आता हूं न साब! पर आपके चुनाव में।

क्या खाते हो भाई?
“जो एक दलित खाता है साब!”
नहीं मतलब क्या-क्या खाते हो?
आपसे मार खाता हूं
कर्ज़ का भार खाता हूं
और तंगी में नून तो कभी अचार खाता हूं साब!
नहीं मुझे लगा कि मुर्गा खाते हो!
खाता हूं न साब! पर आपके चुनाव में।

क्या पीते हो भाई?
“जो एक दलित पीता है साब!”
नहीं मतलब क्या-क्या पीते हो?
छुआ-छूत का ग़म
टूटे अरमानों का दम
और नंगी आंखों से देखा गया सारा भरम साब!
मुझे लगा शराब पीते हो!
पीता हूं न साब! पर आपके चुनाव में।

क्या मिला है भाई
“जो दलितों को मिलता है साब!”
नहीं मतलब क्या-क्या मिला है?
ज़िल्लत भरी ज़िंदगी
आपकी छोड़ी हुई गंदगी
और तिस पर भी आप जैसे परजीवियों की बंदगी साब!
मुझे लगा वादे मिले हैं!
मिलते हैं न साब! पर आपके चुनाव में।

क्या किया है भाई?
“जो दलित करता है साब!”
नहीं मतलब क्या-क्या किया है?
सौ दिन तालाब में काम किया
पसीने से तर सुबह को शाम किया
और आते जाते ठाकुरों को सलाम किया साब!
मुझे लगा कोई बड़ा काम किया!
किया है न साब! आपके चुनाव का प्रचार!

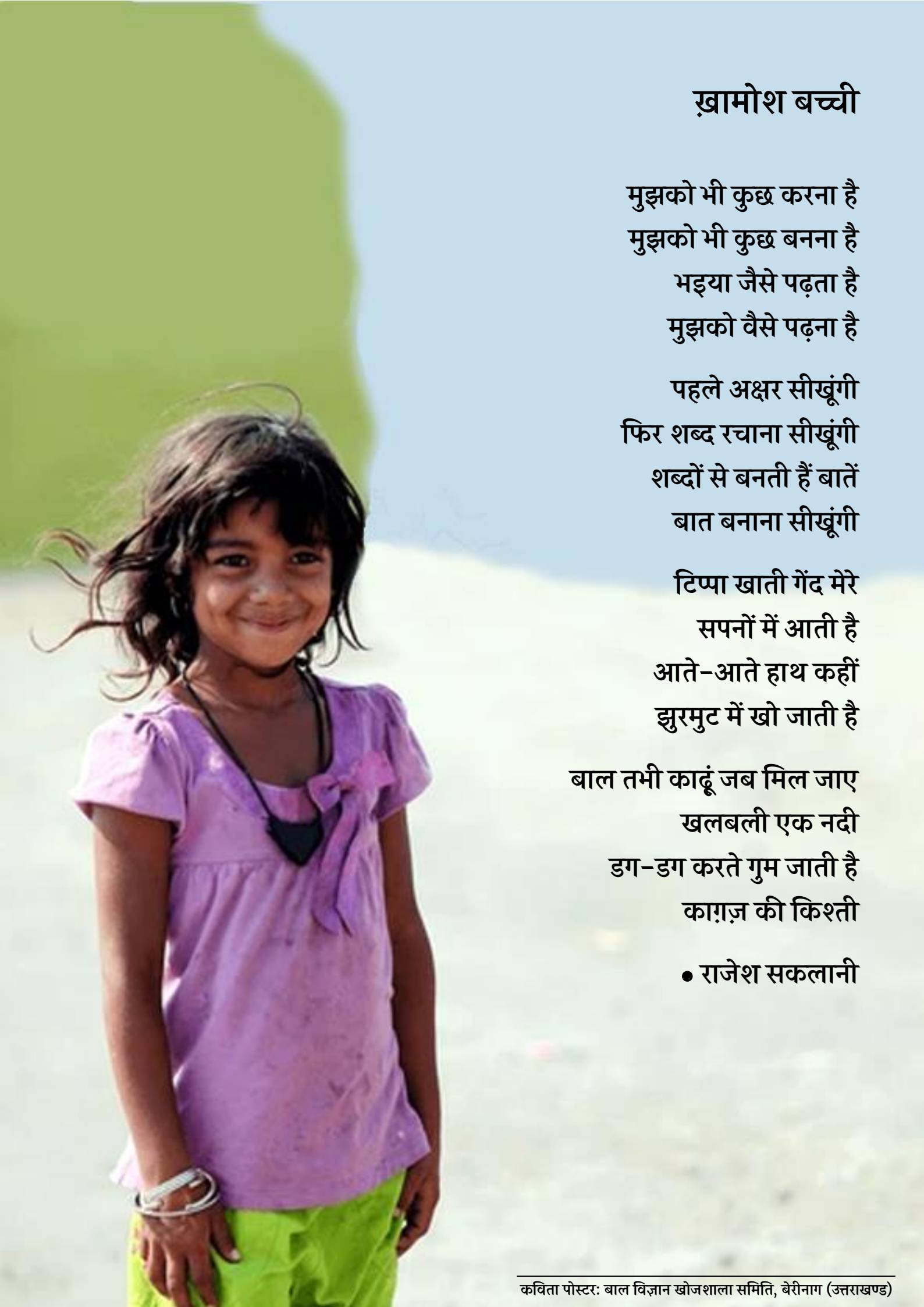

ख़ामोश बच्ची

मुझको भी कुछ करना है
मुझको भी कुछ बनना है
भइया जैसे पढ़ता है
मुझको वैसे पढ़ना है

पहले अक्षर सीखूंगी
फिर शब्द रचाना सीखूंगी
शब्दों से बनती हैं बातें
बात बनाना सीखूंगी

टिप्पा खाती गेंद मेरे
सपनों में आती है
आते-आते हाथ कहीं
झुरमुट में खो जाती है

बाल तभी काढ़ूं जब मिल जाए
खलबली एक नदी
डग-डग करते गुम जाती है
काग़ज़ की किश्ती

• राजेश सकलानी

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

खुशबू

दरक रहा हूँ
उड़ती हुई खुशबू के बोझ से

एक प्राचीन तस्वीर के पुर्जे
उड़ रहे हैं मेरे चारों तरफ

वह है
उसके जूड़े पर बँधी है फूलों की वेणी
उसके थोड़ा पीछे खड़ा हूँ मैं
मेरे हाथ कंधों पर हैं उसके
मेरे और फोटोग्राफर के लाख कहने पर भी
वह सामने नहीं देख रही है कैमरे की तरफ

प्रस्तुत हैं हम
रुकी हुई हैं साँस

कौंधता है प्रकाश
कोई हल्की-सी ध्वनि होती है
और पलक झपकते
बीत जाते हैं हम

पीली पड़ चुकी इस तस्वीर में
झुकी हुई आँखें हैं उसकी
और वह खुशबू भी गमकती हुई
हमारे उस समय में

उड़ती हुई खुशबू के बोझ से
दरक रहा हूँ।

● आशुतोष दुबे

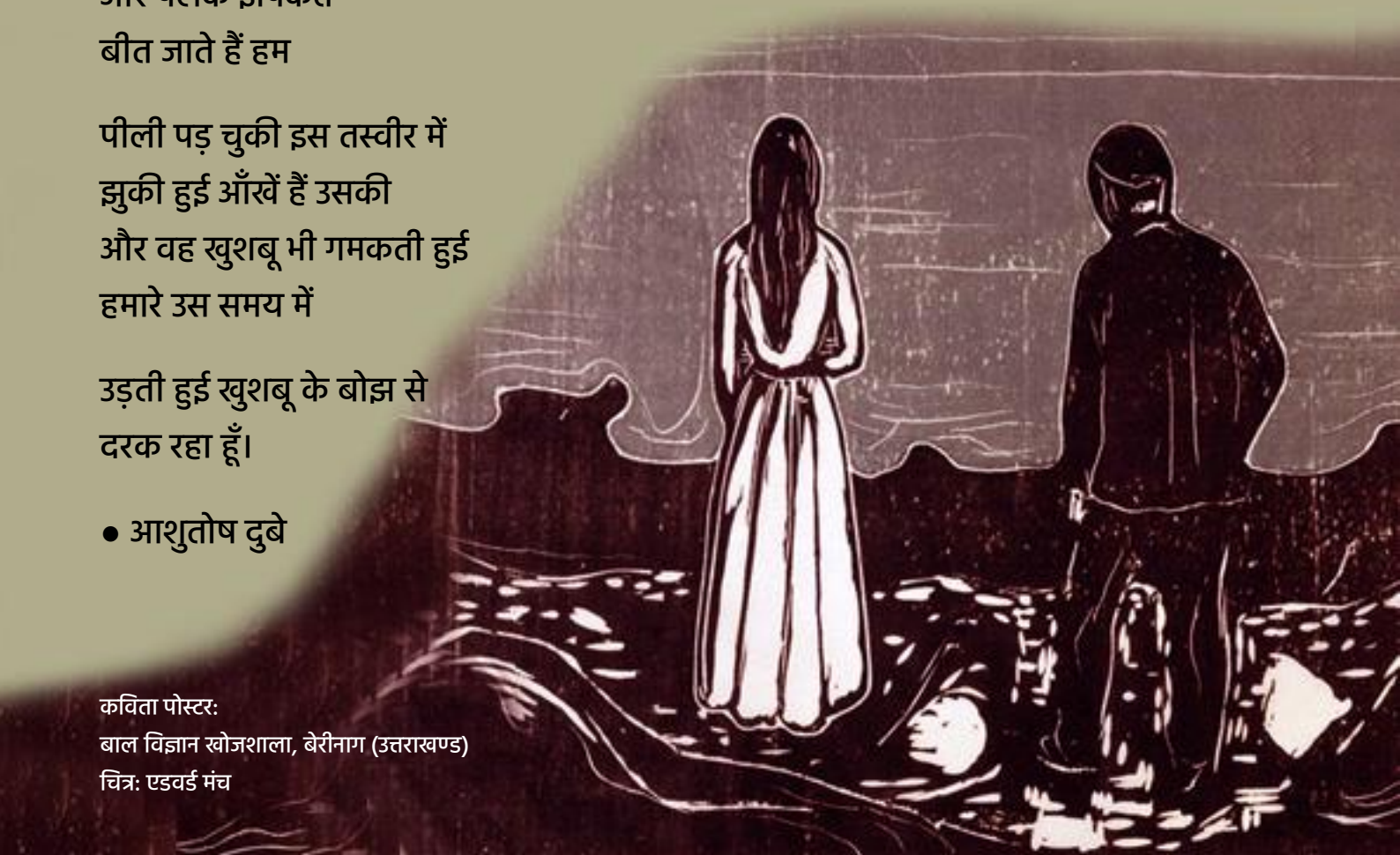

कविता पोस्टर:
बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)
चित्र: एडवर्ड मंच

गुज़रना

जो वेटर तुम्हारे सामने प्लेट रख कर गया,
तुमने उसका चेहरा भी नहीं देखा
जबकि तुमसे उसने ऑर्डर लिया था।

वह ड्राइवर जैसे गाड़ी चलाने की मशीन था,
जो तुम्हें कहीं से कहीं ले गया और
अब तुम्हें उसकी शक्ल याद करने में मशक़्क़त करनी होगी।

जिन सहयात्रियों के साथ तुमने दो दिन सफ़र किया
और दुनिया जहान की बातें कीं,
वे ट्रेन से क्या उतरे ज़हन से ही उतर गए।

जो सहकर्मी तुम्हारे साथ वर्षों रहे
वे अब तुम्हारी स्मृति और संदर्भों से भी रिटायर हो गए।

तुम बहुत जल्दी गुज़र रहे हो।
खाली हाथ और जल्दी गुज़र जाओगे।

● आशुतोष दुबे

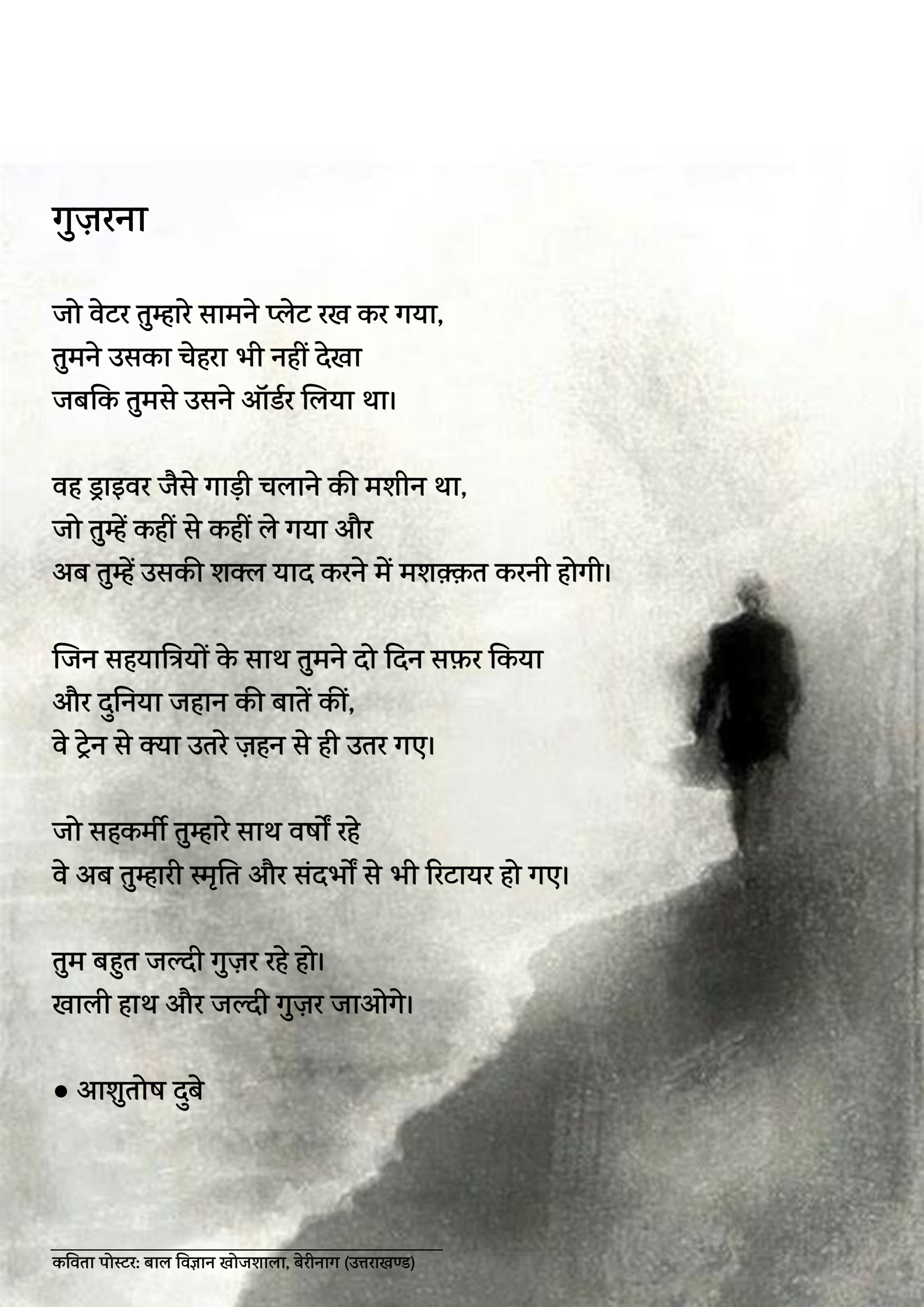

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

गूँज

खाली घर में गूँजती है आवाज़

घर हमारा है
खालीपन घर का
आवाज़ हमारी है
और गूँज घर की

हमने ख़ुद को कभी इस तरह नहीं सुना
कि हम कुछ कहें
और हमारा घर उसमें अपना भी कुछ जोड़ दे
वह इस तरह हमारी आवाज़ में शामिल हो जाए
कि हम चौंक जाएँ

हम ले आएँगे चीज़ें और चीज़ें और चीज़ें
भर देंगे इस खालीपन को
हमारी गूँज को सोख लेंगी चीज़ें
चीज़ें हमारी आवाज़ को भी जज़्ब कर लेंगी
उनके बीच बैठे हुए एक दिन हम उन्हीं की तरह लगेंगे

तब हम कुछ नहीं कहेंगे
और कहीं गूँज नहीं होगी
ग़ौर से सुनेंगे तो आवाज़ भी नहीं होगी
थोड़ा ध्यान से देखेंगे तो शायद हम भी नहीं होंगे

और हमें अटपटा नहीं लगेगा
कि यह कोई नई चीज़ नहीं होगी

• **आशुतोष दुबे**

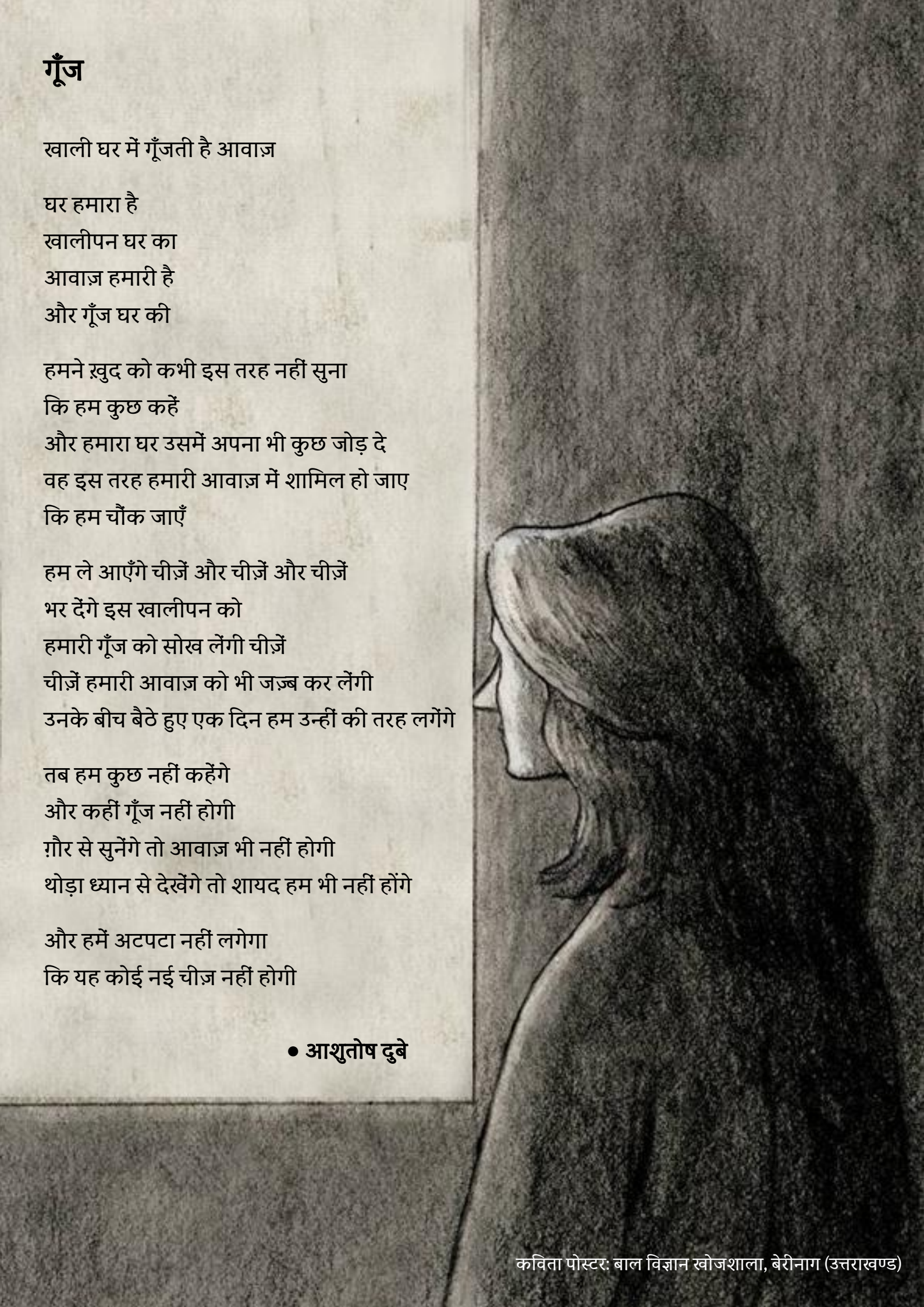

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

घड़ियाँ

घड़ियाँ होती हैं निहायत बेवक़ूफ़
बुरी से बुरी घड़ी में भी
वे कुछ न कुछ बजाती रहती हैं
उनसे भी ज़्यादा बेवक़ूफ़ वे
जो वक़्त के लिए घड़ियों का मुँह ताका करते हैं
बेकार लोगों की घड़ियों में होता है
बेकार का वक़्त

जिन्होंने दुनिया में किए बड़े काम
क्या उन्होंने कभी घड़ियों का मुँह ताका?
यदि आप किसी को बार-बार घड़ी देखते पाएँ
तो समझ जाएँ कि वह
किसी दूसरे के वक़्त से चल रहा है
और जिसका वक़्त दूसरे के क़ब्ज़े में जा चुका है
उसके पास अब बचा क्या है?

• नरेश सक्सेना

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

घिर गई है रात तो क्या
चुक गई हैं बात तो क्या
मैं फिर से सूरज लाऊंगा
फिर से धरा चमकाऊंगा

बढ़ गया है झूठ तो क्या
पिट गया है सत्य तो क्या
मैं फिर भरोसा जगाऊंगा
मैं फिर धरती महकाऊंगा

मर गई इंसानियत तो क्या
बढ़ गई हैवानियत तो क्या
मैं फिर भाईचारा गाऊंगा
मैं फिर दोस्ती सिखाऊंगा

बढ़ गई है आग तो क्या
हुए जंगल खाक तो क्या
मैं फिर पौधे लगाऊंगा
मैं फिर जंगल उगाऊंगा

बढ़ रहा अनाचार तो क्या
उठ रहे चीत्कार तो क्या
मैं फिर न्याय लौटाऊंगा
मैं फिर सितम मिटाऊंगा

बढ़ गए हैं क्लेश तो क्या
थमते नहीं गलदश्रु तो क्या
मैं फिर से खुशियां लाऊंगा
जीवन का गीत गुनगुनाऊंगा

मैं जो हार गया हूं तो क्या
ठहरा दिया बेकार तो क्या
मैं नई पीढ़ी को सिखाऊंगा
मैं धरती को स्वर्ग बनाऊंगा

• मुकेश कांडपाल

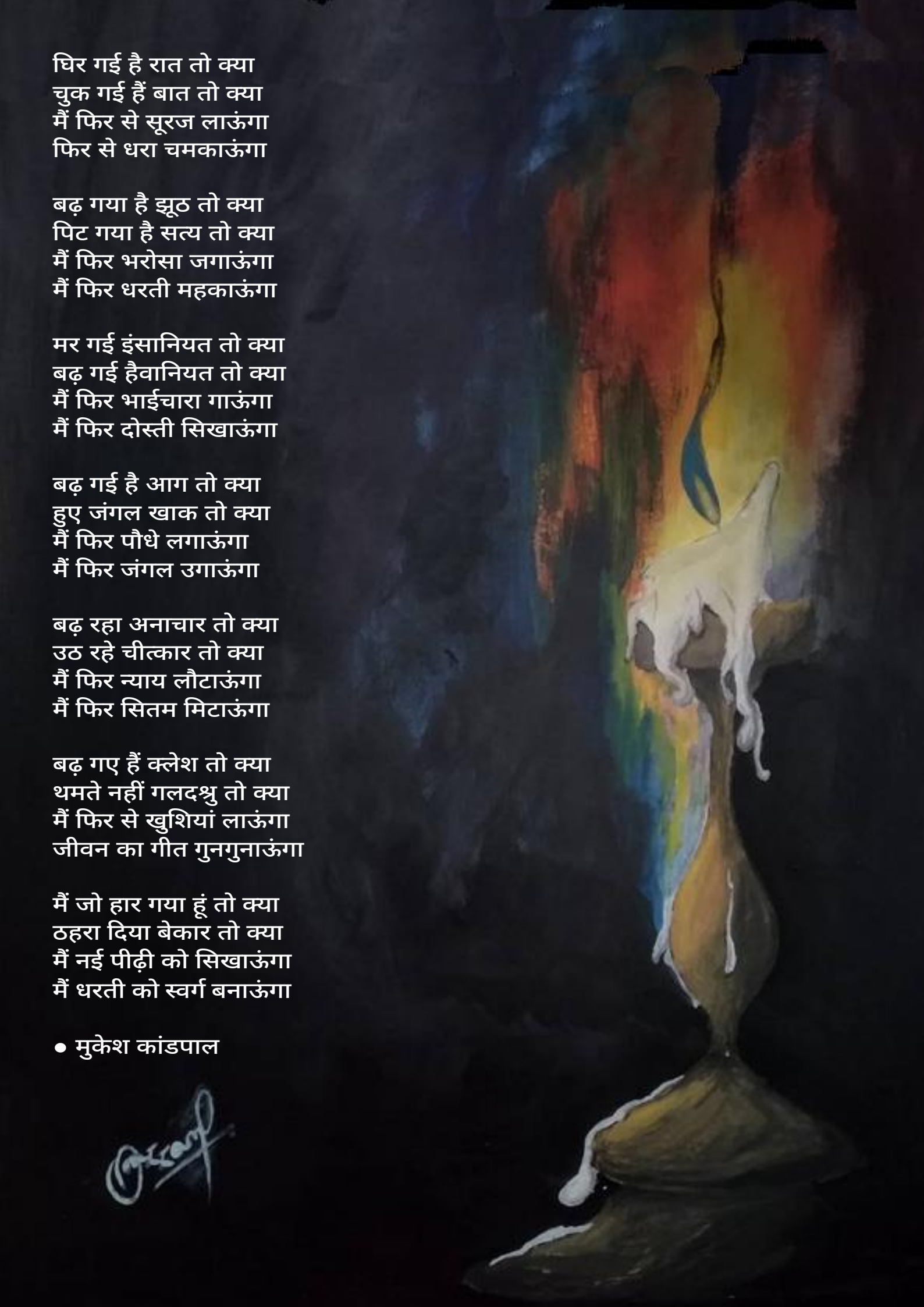

चलते-चलते
चप्पलों का घिस जाना
एक मुहावरा है

जो लागू नहीं होता उन पाँवों पर
जिनमें चप्पलें नहीं हैं
हैं बस बिवाइयाँ

जो घिसती नहीं हैं
बस रिसती हैं।

• कविता कादम्बरी

छाप तिलक

उसका छाप तिलक से पटा हुआ माथा
इस बात की पुष्टि करता है कि
उसे पसीना नहीं आता

उसे पूरा विश्वास है कि
धूप में निकले बगैर
मेहनत मजूरी किए बगैर
उसे वह सब कुछ मिल जाएगा
जो एक मजदूर को
अपनी हाड़ तोड़ मेहनत पर भी नहीं मिलता

अब उसकी सारी मेहनत और कलाबाजी
तिलक को सजाने में लगती है
माथा रंगाने में लगती है
ये कामचोरी की सबसे बड़ी लूट है
क्योंकि उसे छूट है ...

● बच्चा लाल 'उन्मेष'

छाया-पुरुष

अपनी छाया मात्र
बड़ी करते हैं हम
प्रकाश के विरोध में
खड़े होकर

और देखते हैं
गर्व से चारों तरफ़
इस तरह
बड़े होकर!

• भवानीप्रसाद मिश्र

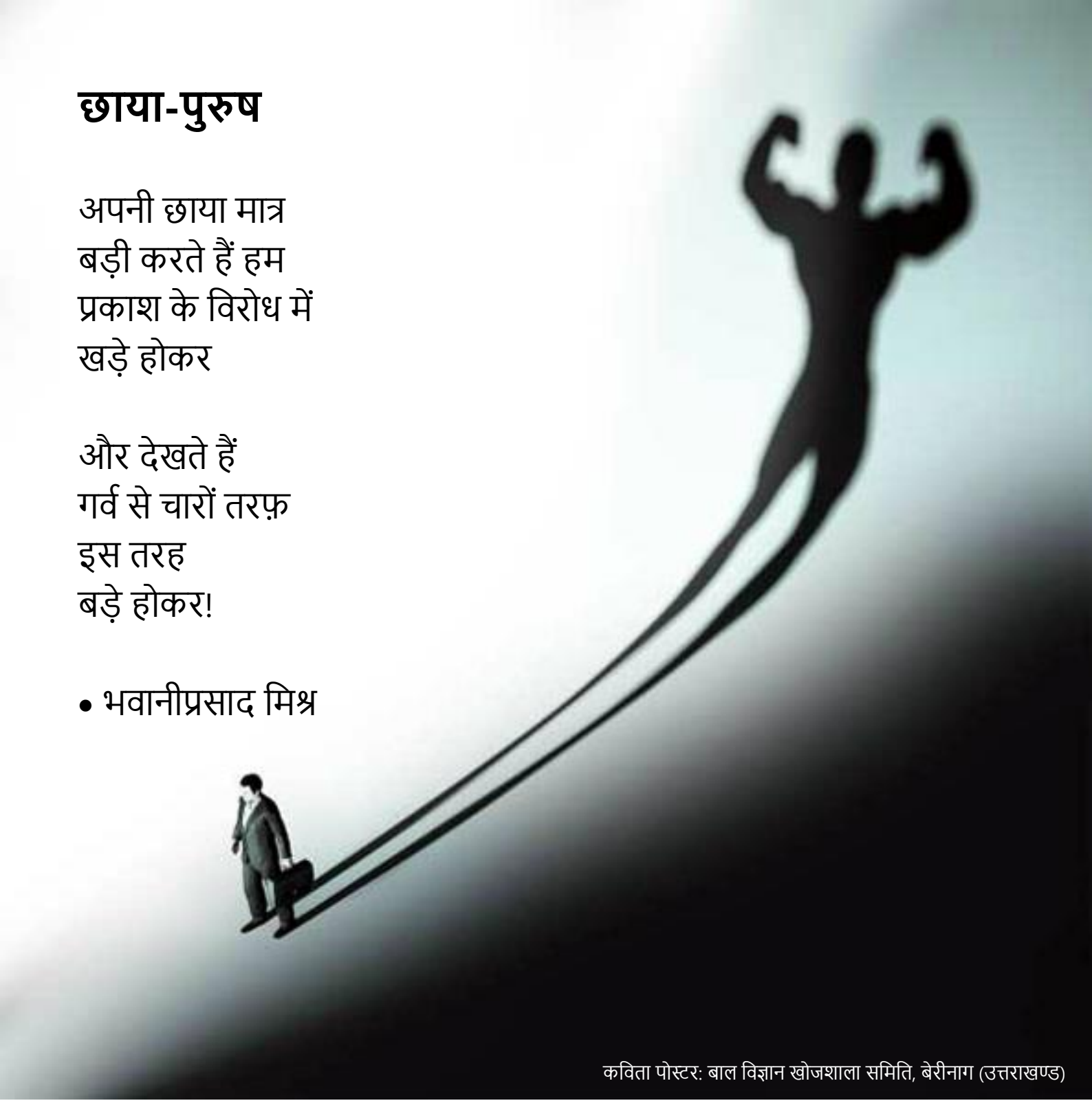

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

छुपाछाई

दाम तुम पर है
तुम गिनती गिनते हो
और पीछे मुड़ते हो
वह तुम्हें दिख जाता है
उसके शर्ट का छोर
हिलता हुआ
और तुम उल्लास से चीखते हो
मन्नू एक्सप्रेस!

छुपने की बारी अब तुम्हारी है
तुम छुपते हो
और छुपे रहते हो
बहुत देर हो जाती है
बेचैन होकर
तुम अपने छुपने की जगह से निकलते हो
कहीं कोई नहीं है
तुम्हें कोई नहीं ढूँढ रहा है
शाम ढल गई है
सब अपने-अपने घर चले गए हैं

तब से अब तक कितने बरस हुए
सब छुप गए हैं
कोई नहीं मिल रहा
और तुम अब तक ढूँढ रहे हो

● आशुतोष दुबे

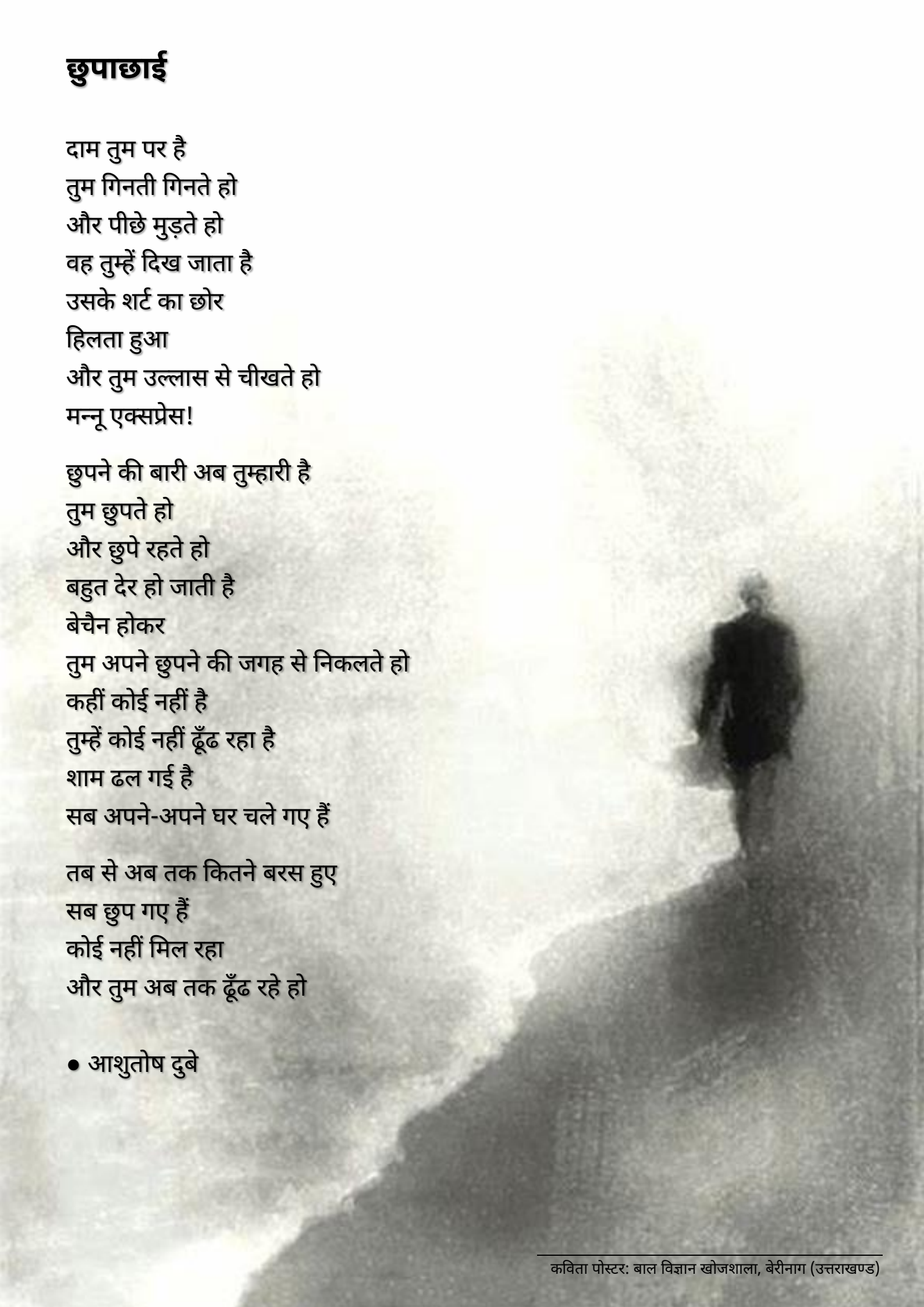

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

जंगल में घुसते हुए
एक शहर का आदमी पूछता है
क्या यहाँ से जंगल शुरू होता है?

जंगल कहता है:
सिर्फ़ जंगल नहीं
यहाँ से एक सभ्यता शुरू होती है.

• जसिंता केरकेट्टा

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

जगह

एक संकुल संसार में
जो चला गया
वह अपने पीछे छोड़कर नहीं गया
कोई खाली जगह

उसी की जगह खाली रही
जो अब तक नहीं आया

बनी हुई जगहें
ईर्ष्या से देखती हैं

किस तरह
अनुपस्थिति बुनती है एक जगह
जो प्रतीक्षा करती है।

• आशुतोष दुबे

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

जब कभी सुख आया

आशुतोष दुबे

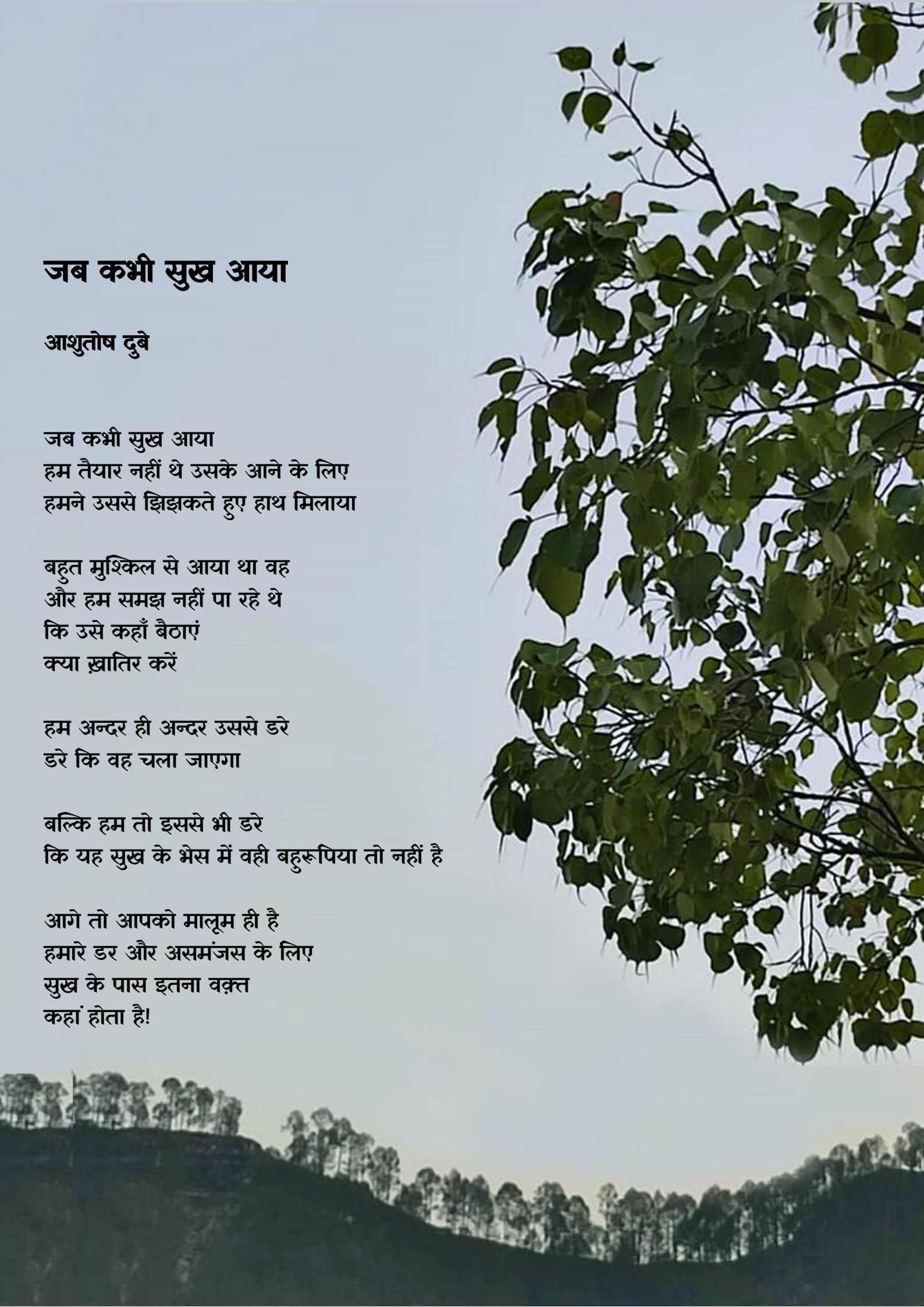

जब कभी सुख आया
हम तैयार नहीं थे उसके आने के लिए
हमने उससे झिझकते हुए हाथ मिलाया

बहुत मुश्किल से आया था वह
और हम समझ नहीं पा रहे थे
कि उसे कहाँ बैठाएं
क्या ख़ातिर करें

हम अन्दर ही अन्दर उससे डरे
डरे कि वह चला जाएगा

बल्कि हम तो इससे भी डरे
कि यह सुख के भेस में वही बहुरूपिया तो नहीं है

आगे तो आपको मालूम ही है
हमारे डर और असमंजस के लिए
सुख के पास इतना वक़्त
कहां होता है!

जब पेड़ उखड़ता है

जंगल से गुजरते हुए उसने
ओक के पेड़ की पत्तियों को चूमा
जैसे अपनी माँ की हथेलियों को चूमा
कहा - यह मेरी माँ का हाथ पकड़कर बड़ा हुआ है
इसके पास आज भी उसका स्पर्श है
जंगल का हाथ पकड़कर
मेरे पुरखे भी बड़े हुए
वे नहीं हैं पर यह आज भी वहीं खड़ा है
इसने मेरे पुरखों की स्मृतियों
और स्पर्शों को बचाकर रखा है
उन्हें महसूस करने के लिए
मैं इन्हें छूता हूँ, चूमता हूँ
मैं इनसे प्यार करता हूँ

जानती हो?
एक पेड़ के उखड़ने से
वह एक बार उखड़ता है
पर उससे जुड़ा आदमी
दो बार उखड़ता है
एक बार अपनी ज़मीन से उखड़ता है
और दूसरी बार अपनों की
स्मृतियों के स्पर्श से उजड़ता है।

• जसिन्ता केरकेट्टा

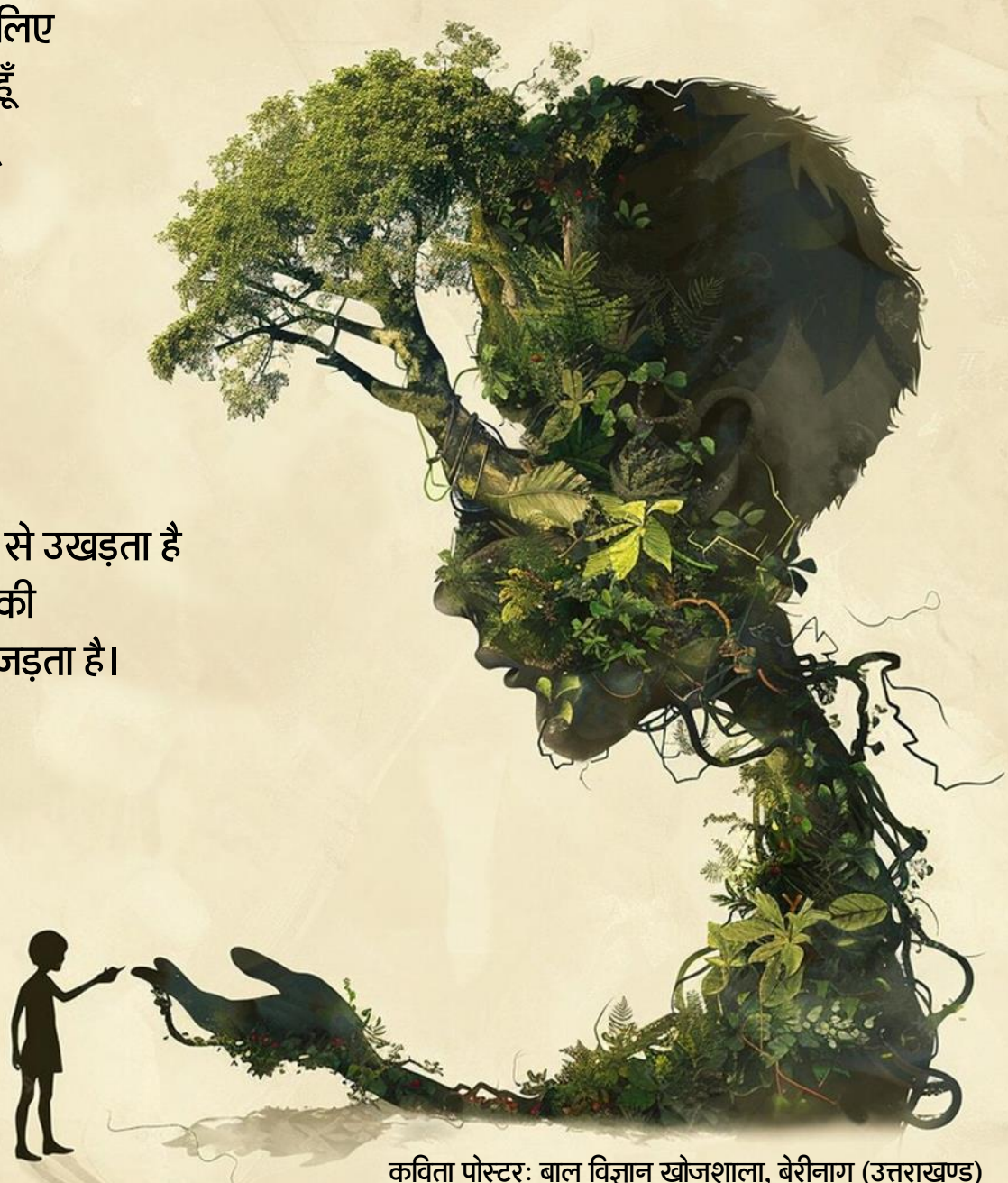

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

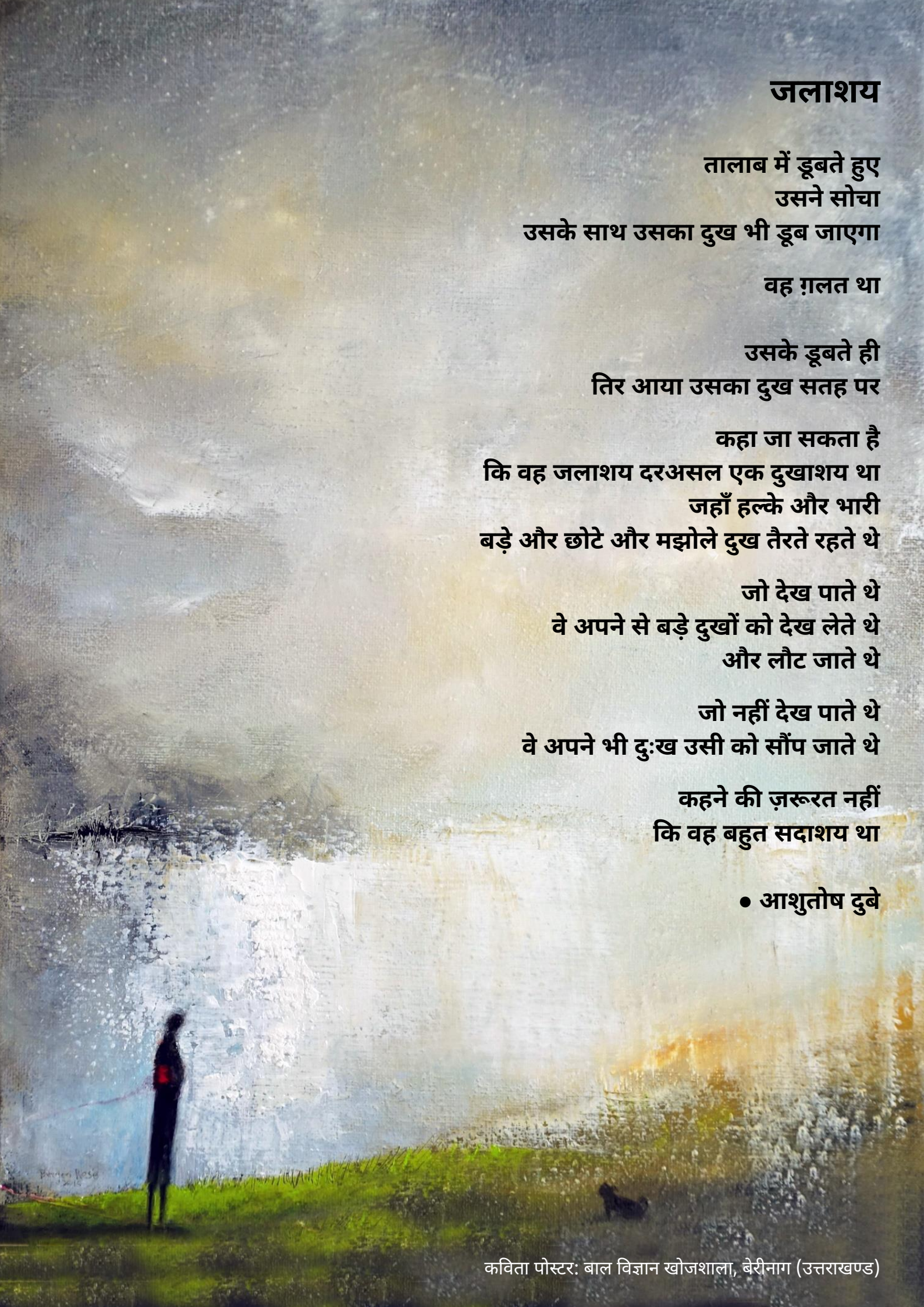

जलाशय

तालाब में डूबते हुए
उसने सोचा
उसके साथ उसका दुख भी डूब जाएगा

वह ग़लत था

उसके डूबते ही
तिर आया उसका दुख सतह पर

कहा जा सकता है
कि वह जलाशय दरअसल एक दुखाशय था
जहाँ हल्के और भारी
बड़े और छोटे और मझोले दुख तैरते रहते थे

जो देख पाते थे
वे अपने से बड़े दुखों को देख लेते थे
और लौट जाते थे

जो नहीं देख पाते थे
वे अपने भी दुःख उसी को सौंप जाते थे

कहने की ज़रूरत नहीं
कि वह बहुत सदाशय था

• आशुतोष दुबे

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

जितने सभ्य होते हैं
उतने अस्वाभाविक।

आदिवासी जो स्वाभाविक हैं
उन्हें हमारी तरह सभ्य होना है
हमारी तरह अस्वाभाविक।

जंगल का चंद्रमा
असभ्य चंद्रमा है
इस बार पूर्णिमा के उजाले में
आदिवासी खुले में इकट्ठे होने से
डरे हुए हैं
और पेड़ों के अंधेरे में दुबके
विलाप कर रहे हैं

क्योंकि एक हत्यारा शहर
बिजली की रोशनी से
जगमगाता हुआ
सभ्यता के मंच पर बसा हुआ है।

• विनोद कुमार शुक्ल

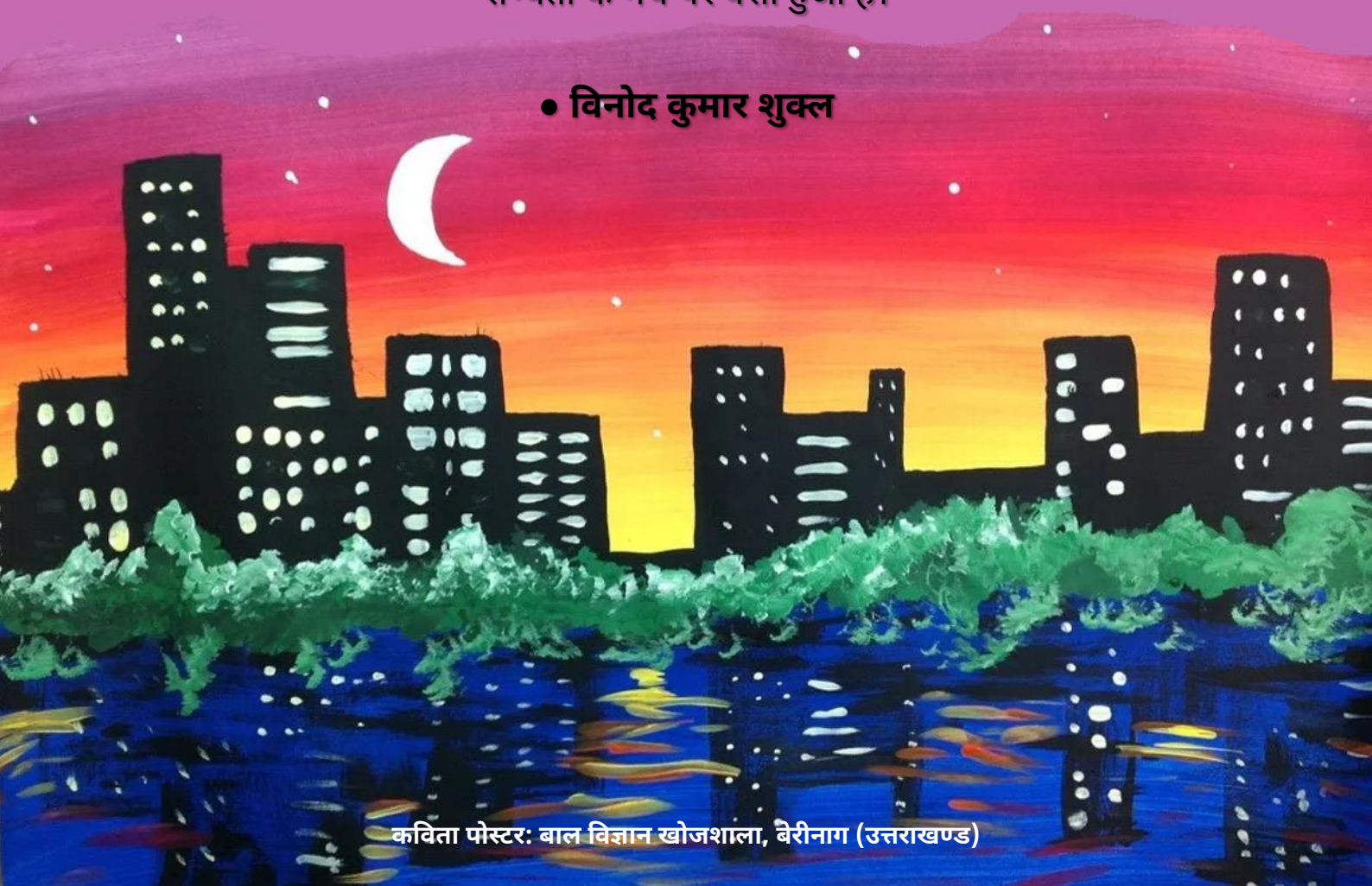

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

तुम्हारी उड़ान

कपड़े ये छोटे पड़ जाएंगे
खिलौने समेट कर रख दिए जाएंगे किसी बक्से में
कॉपी-किताबें गत्ते के उस डिब्बे में धर कर चढ़ा दी जाएंगी टांड पर
ये साइकिल जो अब इतनी नन्हीं मुन्नी लगती है
छत पर पड़ी उम्रदराज होती जाएगी
कहानियों की उन क़िताबों में
तस्वीरें अपनी नींद और जाग के बीच ठिठकी रहेंगी

भुनभुनाते खीझते
हम सब को अवेरते रहेंगे

फेंकना हो नहीं पाएगा हमसे
देने की छाती नहीं होगी

तुम्हारा आसमान बहुत बड़ा हो जाएगा
तुम्हें फिर भी कम पड़ेगा मगर

हम अपनी आँखों को हाथ की ओट देकर धूप से बचाते
कमज़ोर होती अपनी नज़रों को गड़ाए रखेंगे तुम्हारी उड़ान पर

इतने ऊपर से कहाँ देख पाओगे ये सब

● आशुतोष दुबे

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

तुम्हारी तरह

रोक़ डाल्टन

तुम्हारी तरह
मुझे भी मुहब्बत है
प्रेम, जीवन और चीज़ों की मीठी ख़ुशबू से,
और जनवरी के आकाश जैसे उजले नीले नज़ारों से।

और मेरा खून उबलता है
और मैं अपनी आँखों में हँसता हूँ,
जिन्हें आँसुओं का स्वाद पता है।

मुझे भरोसा है कि दुनिया ख़ूबसूरत है
और रोटी की तरह कविता भी हरेक की ज़रूरत है
और मेरी शिराएं मुझ में ही खत्म नहीं होतीं
बल्कि उन सब के साझे खून में मिल जाती हैं
जो लड़ रहे हैं-
जीवन और प्रेम के लिए,
छोटी-छोटी चीज़ों के लिए,
नज़ारों, रोटी और
हर किसी की कविता के लिए।

(अनुवाद: आशुतोष उपाध्याय)

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

तुम्हारी तीर्थयात्रा

धीमी चाल
जरा और धीमी भी चलेगी
अचानक बारिश होने लगे
तो खुद को तर हो जाने दो
बारिश, अपनी पुरानी दोस्त

अकेली सुंदर बात है- निकल पड़ना
यह दुनिया इतनी बड़ी है
कि एक जगह
या तीन या चार जगह
रह लेना काफी नहीं है

तो चलते रहो
जब तक सूरज डूब जाए
और परछाईं
तुम्हारी चिरंतन मित्र
तुम्हारा साथ छोड़ दे
और दिन अगर हो बादलों भरा
फिर तो कहना ही क्या,
चलते चलो।

• को-उन (कोरियाई कवि)
अनुवादः चंद्रभूषण

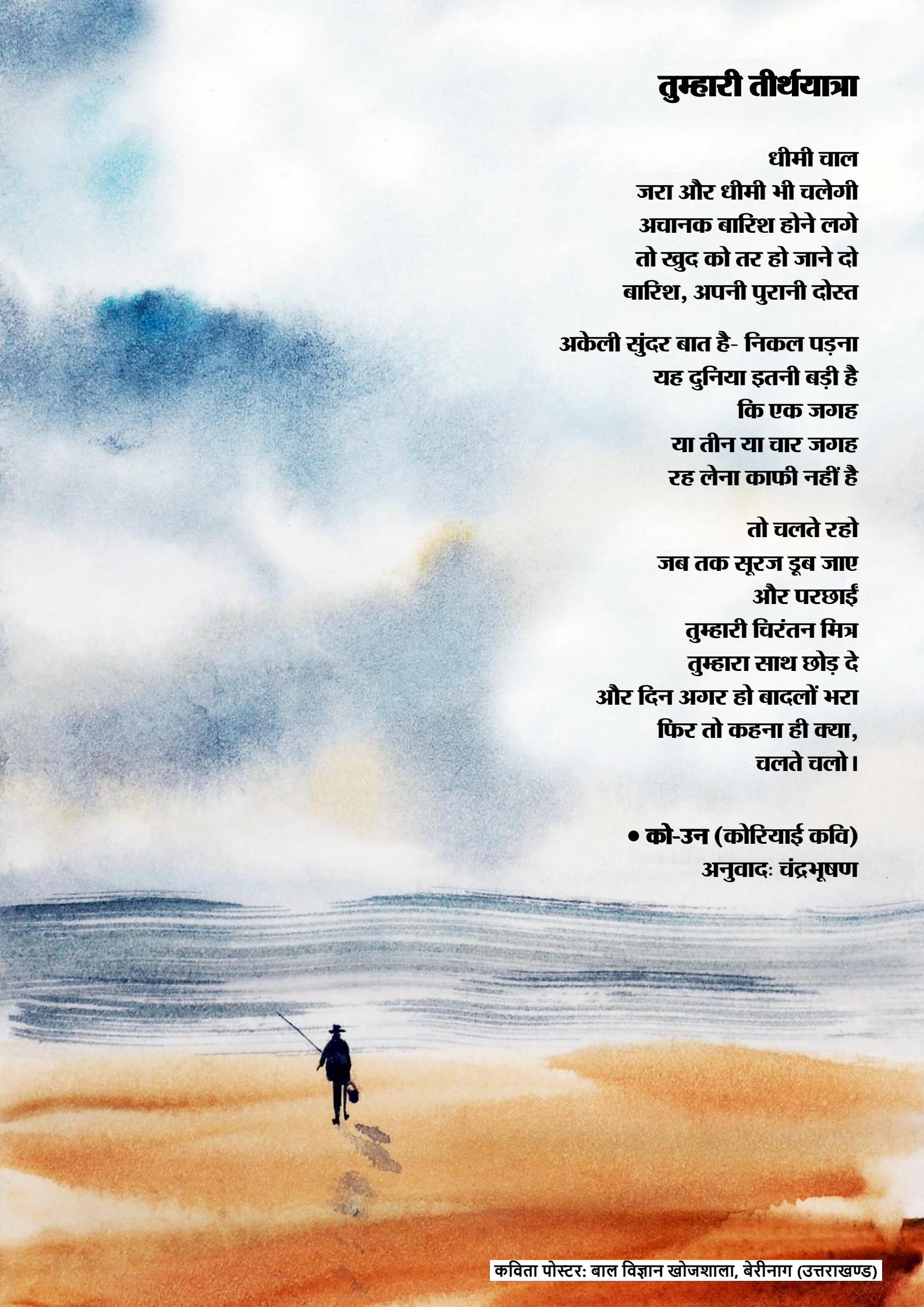

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

तुम्हारे साथ रहकर

तुम्हारे साथ रहकर
अक्सर मुझे ऐसा महसूस हुआ है
कि दिशाएँ पास आ गयी हैं,
हर रास्ता छोटा हो गया है,
दुनिया सिमटकर
एक आँगन-सी बन गयी है
जो खचाखच भरा है,
कहीं भी एकान्त नहीं
न बाहर, न भीतर।

हर चीज़ का आकार घट गया है,
पेड़ इतने छोटे हो गये हैं
कि मैं उनके शीश पर हाथ रख
आशीष दे सकता हूँ,
आकाश छाती से टकराता है,
मैं जब चाहूँ बादलों में मुँह छिपा सकता हूँ।

तुम्हारे साथ रहकर
अक्सर मुझे महसूस हुआ है
कि हर बात का एक मतलब होता है,
यहाँ तक कि घास के हिलने का भी,
हवा का खिड़की से आने का,
और धूप का दीवार पर
चढ़कर चले जाने का।

तुम्हारे साथ रहकर
अक्सर मुझे लगा है
कि हम असमर्थताओं से नहीं
सम्भावनाओं से घिरे हैं,
हर दिवार में द्वार बन सकता है
और हर द्वार से पूरा का पूरा
पहाड़ गुज़र सकता है।

शक्ति अगर सीमित है
तो हर चीज़ अशक्त भी है,
भुजाएँ अगर छोटी हैं,
तो सागर भी सिमटा हुआ है,
सामर्थ्य केवल इच्छा का दूसरा नाम है,
जीवन और मृत्यु के बीच जो भूमि है
वह नियति की नहीं मेरी है।

• सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखंड); चित्र: Sarah Luginbill

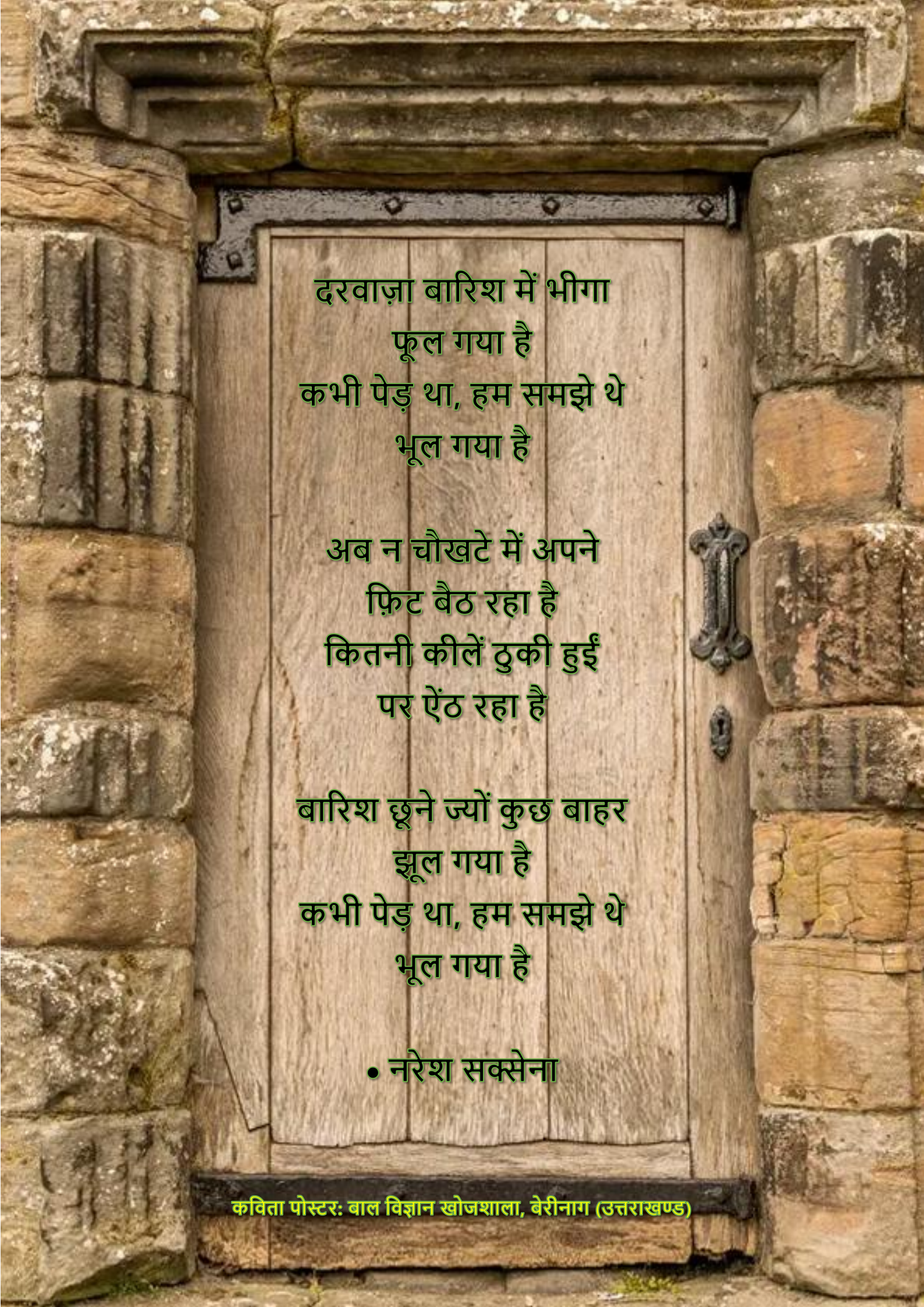

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

दूध का उफनना

गर्म होते हुए दूध के पास
खड़े रहना एक तपस्या है
अगर रह जाओ तो देखोगे
तुम्हारे धीरज की परत उस पर कैसे झिलमिलाने लगी है

परत को फोड़ते हुए
अब उसमें उबाल का कोई प्रारम्भिक बुलबुला फूटा है
अब उसमें ज्वार बढ़ रहा है
एक पहाड़ उग रहा है
जो पतीली के तटबन्ध तोड़ कर
प्रपात की तरह गिरने की तैयारी में है

पहले का विलम्बित तुम्हें भरोसे में रख कर
कब यकबयक द्रुत हो जाता है
तुम ठीक ठीक कभी जान नहीं पाओगे

जिस समय तुम्हारे कान
सड़क से गुजरते सब्जी वाले की आवाज़ पर हैं
जिस समय तुम्हारी आंख घड़ी पर है
जिस समय कुकर की सीटी तुम्हारे दिमाग में बज रही है
जिस समय तुम्हें बिल्कुल समय नहीं है

उसी समय तुम्हारे देखते देखते
उसी समय तुम्हारी नज़र बचा कर
वह उफन जाएगा

बरसों से दूध उफन रहा है
ऊब और आँच के गड़बड़ाए गणित में
इसी तरह जुल देते हुए

बरसों से
तुम उसके सामने
सदमे में, झुंझलाए हुए, पस्त खड़े हो

● **आशुतोष दुबे**

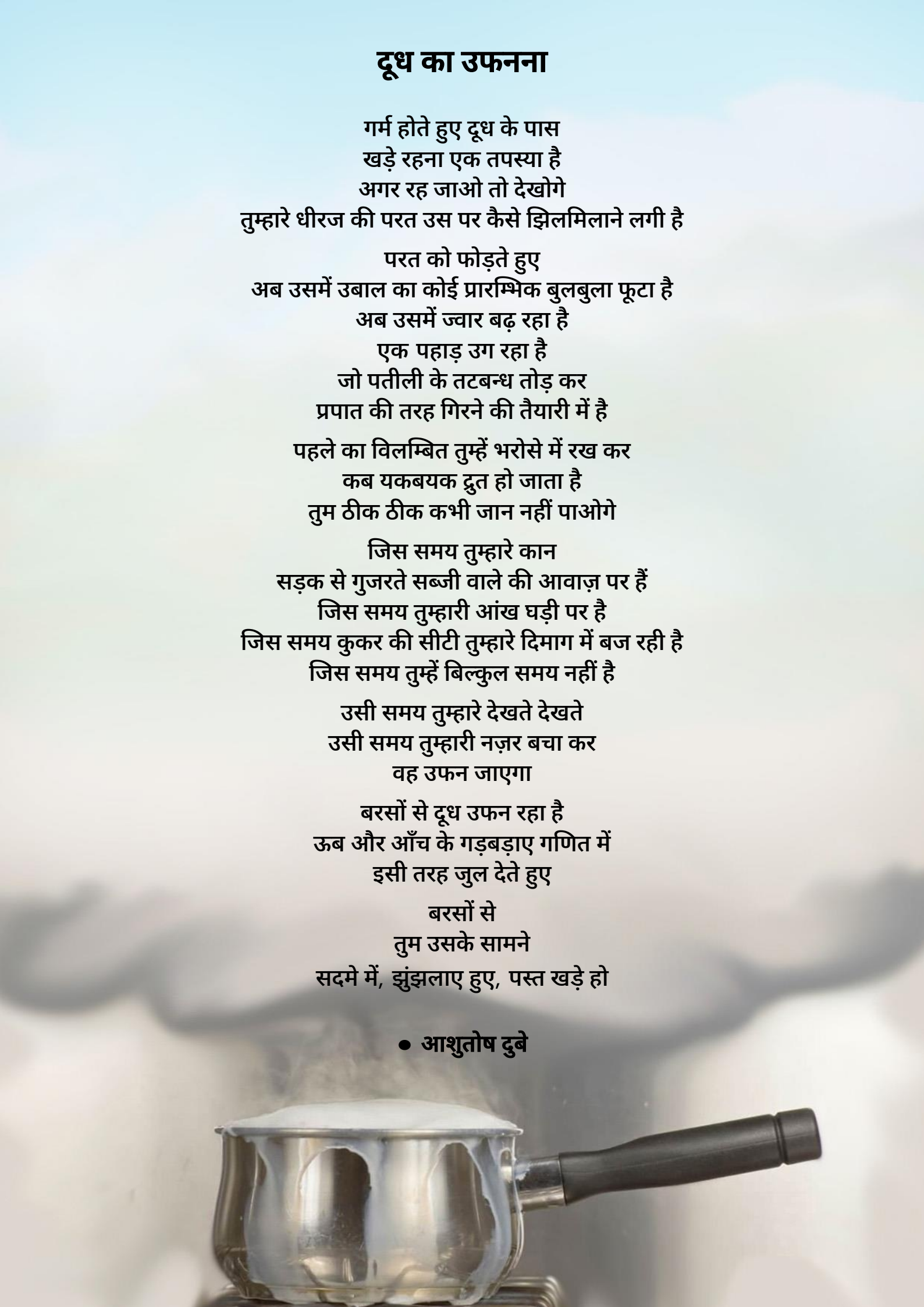

दो बच्चे खेल रहे हैं

दो बच्चे खेल रहे हैं
एक का नाम बाबा है
दूसरे का बाबू

दो बच्चे खेल रहे हैं
एक के लिए खेल ही जीवन है
दूसरे के लिए जीवन खेल

एक खेल खेल के सीख रहा
दूसरा सीखे सिखाए को खेल में मिला रहा
एक के लिए मिट्टी खेल है
दूसरे के लिए सारा खेल मिट्टी

एक की उम्र चढ़ रही है
दूसरे की बढ़ रही है
एक को फुनगी पर जाना है
दूसरे को जड़ों में समाना है

एक का खेल है बाबा
दूसरे का बाबू

दो बच्चे खेल रहे हैं
एक के दांत निकल रहे हैं
दूसरा निकलवा रहा है
दोनों के मिल कर बत्तीस हैं

एक कहीं भी मुत्तू कर सकता है
दूसरे को रुक रुक कर होता है

एक ने बोलना शुरू किया निरर्थक
दूसरा बोल बोल कर हो चुका निरर्थक
एक भाषा सीख रहा है
दूसरा भूल रहा है

एक के पास ढेरों खिलौने हैं
दूसरे के पास सिर्फ़ एक खिलौना

दो बच्चे खेल रहे हैं
एक पहली बार
दूसरा अंतिम बार

● देवेन्द्र आर्य

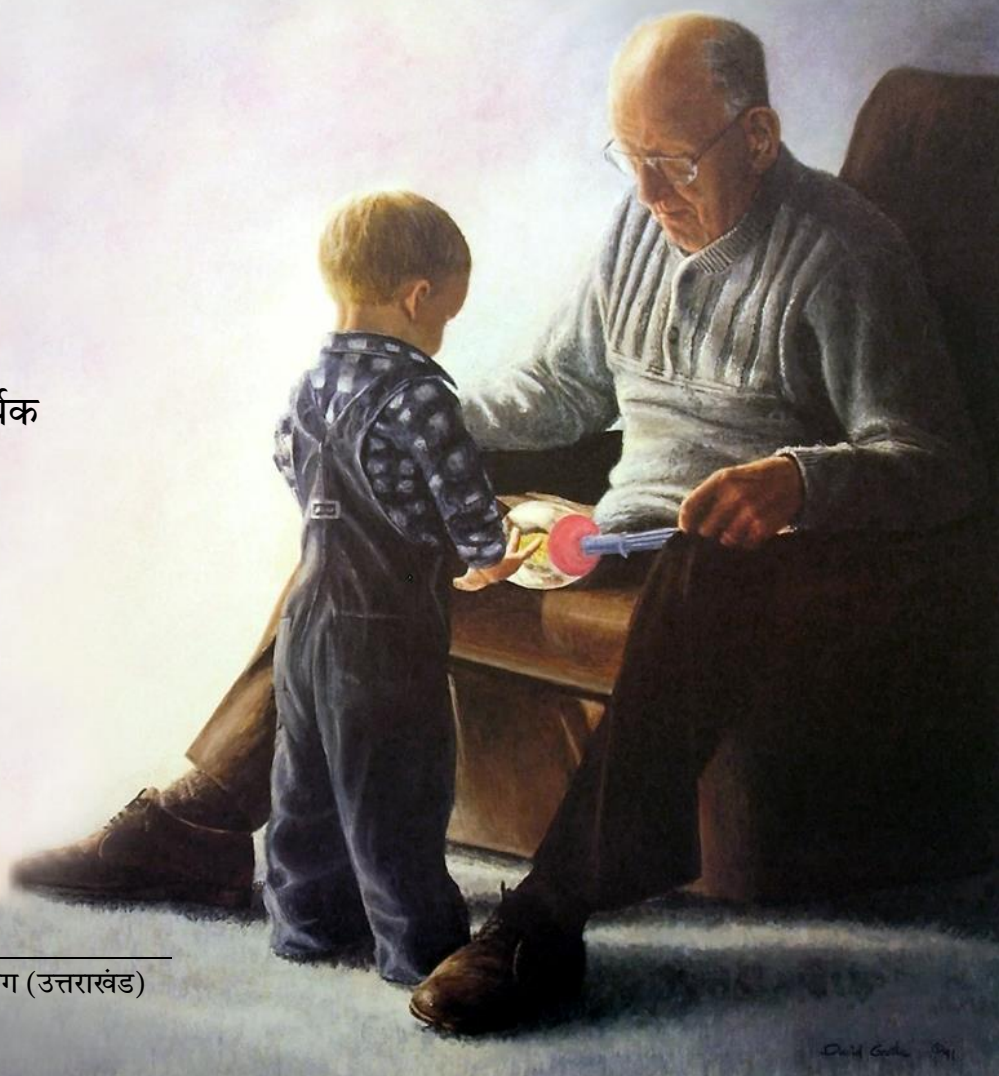

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखंड)

धरती हिलती है
तो बस्तियां मलबों में बदल जाती हैं

समुद्र हिलता है
तो उलट देता है नावों को
जहाजों को डुबो देता है

बादल हिलते हैं
तो बिजलियां गिराते हैं
और खड़ी हुई फसलें
बर्बाद हो जाती हैं

लेकिन हरा भरा पेड़ हिलता है
तो धरती खिले हुए फूलों से
भर जाती है
और झोलिया पके हुए फलों से

लेकिन हरे भरे पेड़ों के
जंगल काटते हुए
नहीं हिलते
मनुष्यों के दिल।

• **नरेश सक्सेना**

(आगामी काव्य संग्रह **'शाम ही तो है'** से)

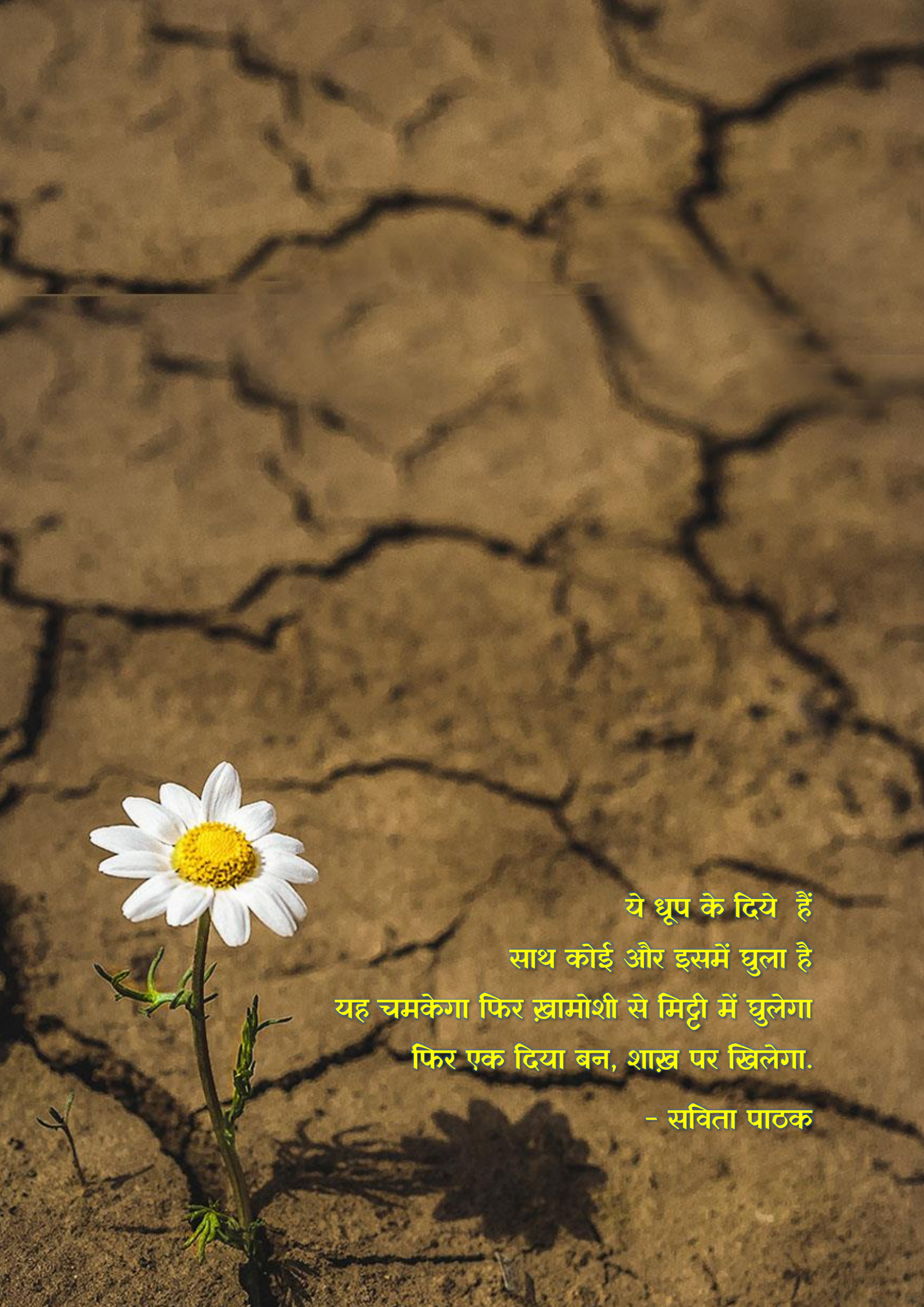

ये धूप के दिये हैं
साथ कोई और इसमें घुला है
यह चमकेगा फिर ख़ामोशी से मिट्टी में घुलेगा
फिर एक दिया बन, शाख़ पर खिलेगा.

- सविता पाठक

नग्न होना

नग्न होना
निर्वस्त्र होना नहीं होता
नग्न होना कुछ और है।

नग्न होना बेशर्म होना है
बेशर्मियों का समूह है नग्न होना।

महावीर का निर्वस्त्र होना
नग्न होना नहीं
द्रोण का एकलव्य से अंगूठा मांग लेना
नग्न होना है।

द्रोपदी को निर्वस्त्र कर देना
द्रोपदी का नग्न हो जाना नहीं होता
दांव पर लगाई जिन्होंने पत्नी
जो बांधे रहे हाथ प्रतिज्ञाओं के अनुपालन में
जो जंघा पर हाथ मारते रहे बेशर्मी से
जो घिघियाये रहे
लेकिन बचाने नहीं आ सके द्रोपदी
वे सब नग्न थे।

जिन्होंने चरित्र के आक्षेप लगाकर
निकाल दी औरतें घर से
जिन्होंने घर में कैद करके रखी औरतें
और खुद बैंकाक-पताया की उड़ाने भरते रहे
जो छोड़-छोड़ भागे औरतें
बड़े आदमी होने के लिए
वे सब नग्न थे।

जिन्होंने अवाम को नहीं सुना उनके कष्ट में
जिन्हें सड़क पर गर्भ गिराती स्त्री नहीं दिखी
जिन्हें मर गए मजदूर
दफन होते किसान नहीं दिखे
सांस के लिए जूझती अवाम नहीं दिखी
वह राजा नग्न है।

निर्वस्त्र होना नग्न होना नहीं होता
बेशर्मियों के समुच्चय जोड़कर जो
सुंदर वस्त्र पहन इठलाता है
वह भद्दा असुंदर नग्न होता है
जो नग्न होता है
वही नग्नता के लिए दुत्कारा जाता है।

निर्वस्त्र होना नग्न होना नहीं होता
वस्त्रों आभूषणों से सजे लोग भी
नग्नता के लिए दुत्कारे जा सकते हैं।

वीरेंदर भाटिया

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखंड)

निडर औरतें

हम औरतें चिताओं को आग नहीं देतीं
क़ब्रों पर मिट्टी नहीं देतीं
हम औरतें मरे हुओं को भी
बहुत समय जीवित देखती हैं

सच तो यह है हम मौत को
लगभग झूठ मानती हैं
और बिछुड़ने का दुख हम
ख़ूब समझती हैं
और बिछुड़े हुओं को हम
ख़ूब याद रखती हैं
वे लगभग सशरीर हमारी
दुनियाओं में चलते-फिरते हैं

हम जन्म देती हैं और इसको
कोई इतना बड़ा काम नहीं मानतीं
कि हमारी पूजा की जाए

ज़ाहिर है जीवन को लेकर हम
काफ़ी व्यस्त रहती हैं
और हमारा रोना-गाना
बस चलता ही रहता है

हम न तो मोक्ष की इच्छा कर पाती हैं
न बैरागी हो पाती हैं
हम नरक का द्वार कही जाती हैं

सारे ऋषि-मुनि, पंडित-ज्ञानी
साधु और संत नरक से डरते हैं
और हम नरक में जन्म देती हैं
इस तरह यह जीवन चलता है

• **शुभा**

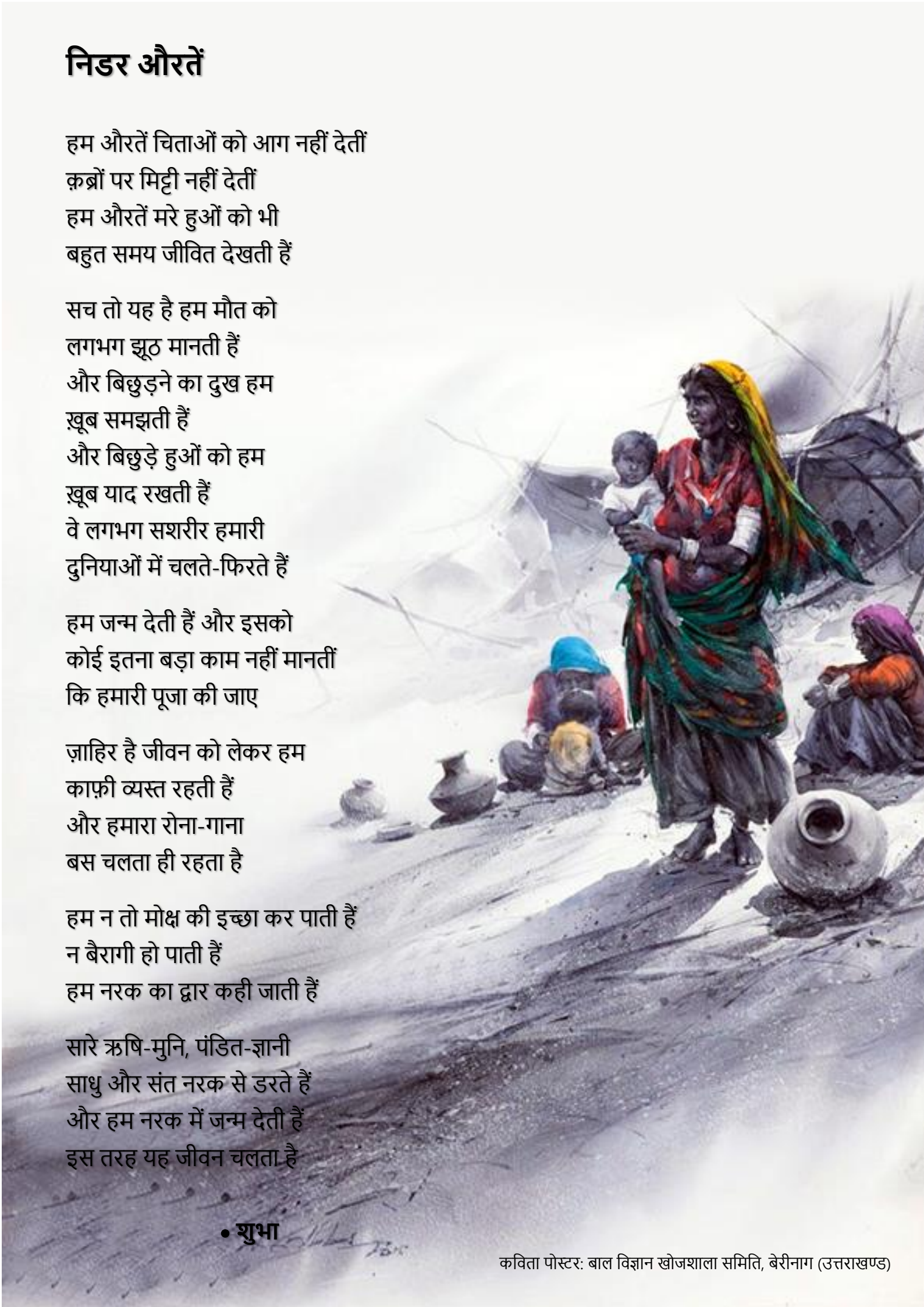

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

पहाड़ पर गांव

कौन आया होगा इस पहाड़ पर
पहली बार

चट्टानों को तोड़ा किसने
उफानों को जोड़ा किसने
किसने पुश्त लगाए होंगे
किसने गांव बसाए होंगे
किन पांवों ने चढ़ी चढ़ाई
किन लोगों ने उम्र लगाई

चूल्हों में आंच लगाई किसने
दंथुली में धार लगाई किसने

सब्बल गैंती किसके साथी
जीती जिसने रोज़ लड़ाई।
वही मूल है उसको ढूंढो
वहीं मान है उसको पाओ
उसका धीरज बहुत बड़ा है
उसके मक़सद पर धार लगाओ।

● राजेश सकलानी

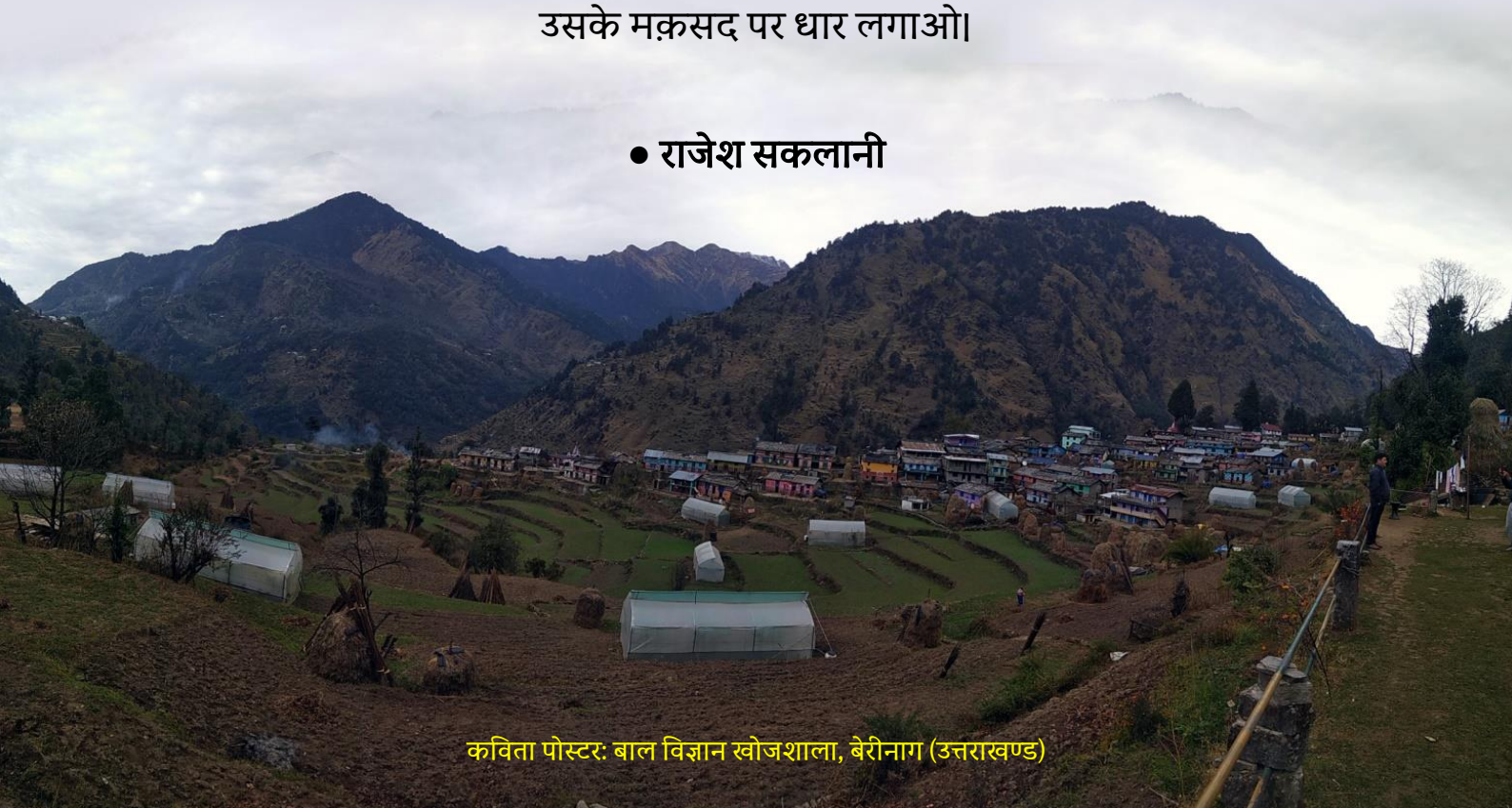

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

पानी क्या कर रहा है

आज जब पड़ रही है कड़ाके की ठंड
और पानी पीना तो दूर
उसे छूने तक से बच रहे हैं लोग
तो ज़रा चल कर देख लेना चाहिए
कि अपने संकट की इस घड़ी में
पानी क्या कर रहा है

अरे! वह तो शीर्षासन कर रहा है
सचमुच झीलों, तालाबों और नदियों का पानी
सिर के बल खड़ा हो रहा है

सतह का पानी ठंडा और भारी हो
लगाता है डुबकी
और नीचे से गर्म और हल्के पानी को
ऊपर भेज देता है ठंड से जूझने

इस तरह लगातार लगाते हुए डुबकियाँ
उमड़ता-घुमड़ता हुआ पानी
जब आ जाता है चार डिग्री सेल्सियस पर
यह चार डिग्री क्या?

यह चार डिग्री वह तापक्रम है दोस्तो,
जिसके नीचे मछलियों का मरना शुरू हो जाता है
पता नहीं पानी यह कैसे जान लेता है
कि अगर वह और ठंडा हुआ
तो मछलियाँ बच नहीं पाएँगी

अचानक वह अब तक जो कर रहा था
ठीक उसका उल्टा करने लगता है
यानी और ठंडा होने पर भारी नहीं होता
बल्कि हल्का होकर ऊपर ही तैरता रहता है
तीन डिग्री हल्का
दो डिग्री और हल्का और
शून्य डिग्री होते ही, बर्फ़ बन कर
सतह पर जम जाता है

इस तरह वह कवच बन जाता है मछलियों का
अब पड़ती रहे ठंड
नीचे गर्म पानी में मछलियाँ
जीवन का उत्सव मनाती रहती हैं

इस वक़्त शीत कटिबंधों में
तमाम झीलों और समुद्रों का पानी जम कर
मछलियों का कवच बन चुका है

पानी के प्राण मछलियों में बसते हैं
आदमी के प्राण कहाँ बसते हैं, दोस्तो
इस वक़्त
कोई कुछ बचा नहीं पा रहा
किसान बचा नहीं पा रहा अन्न को
अपन हाथों से फ़सलों को आग लगाए दे रहा है
माताएँ बचा नहीं पा रहीं बच्चे
उन्हें गोद में ले
कुओं में छलाँगें लगा रही हैं

इससे पहले कि ठंडे होते ही चले जाएँ
हम, चल कर देख लें
कि इस वक़्त जब पड़ रही है कड़ाके की ठंड
तब मछलियों के संकट की इस घड़ी में
पानी क्या कर रहा है।

• नरेश सक्सेना

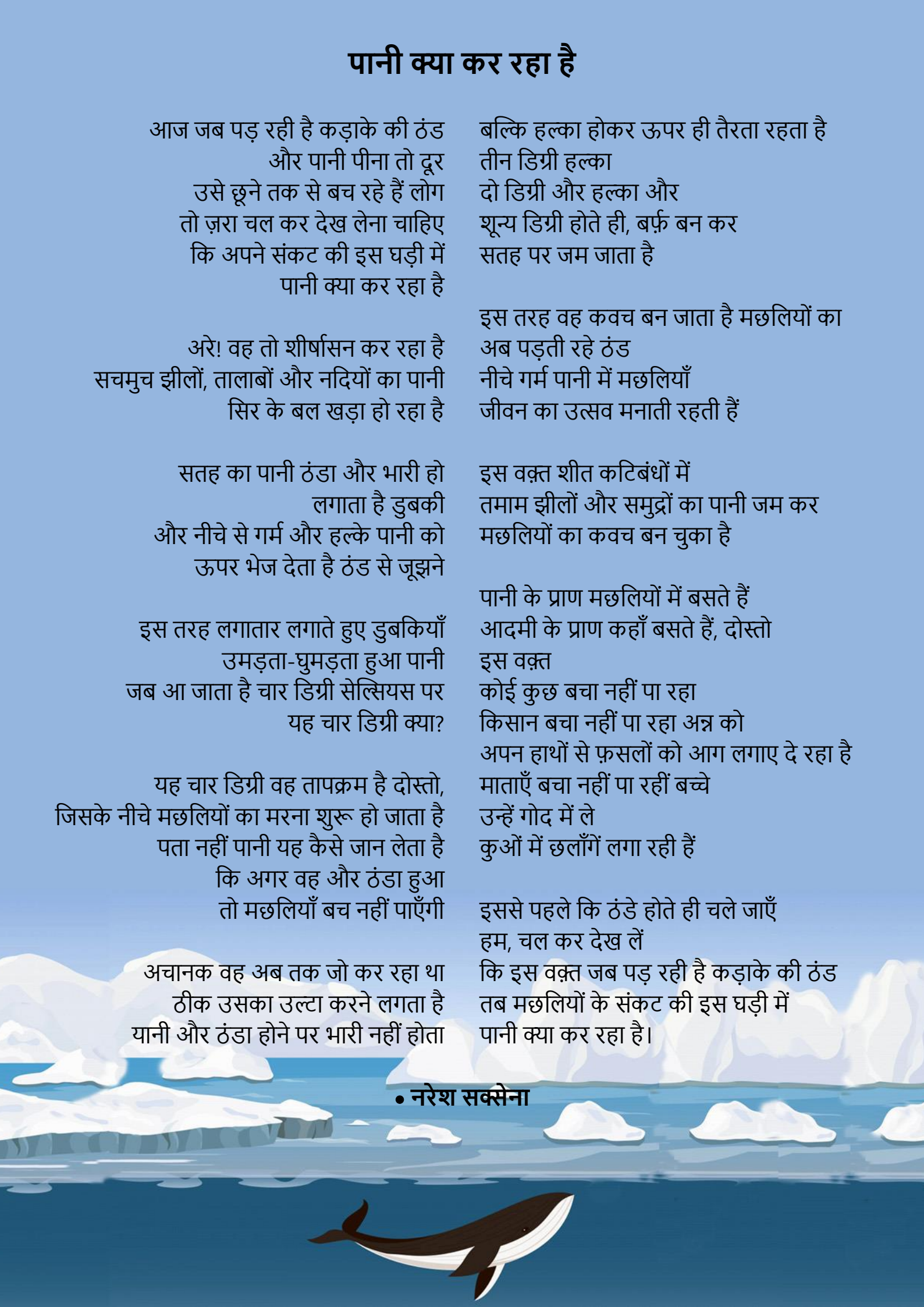

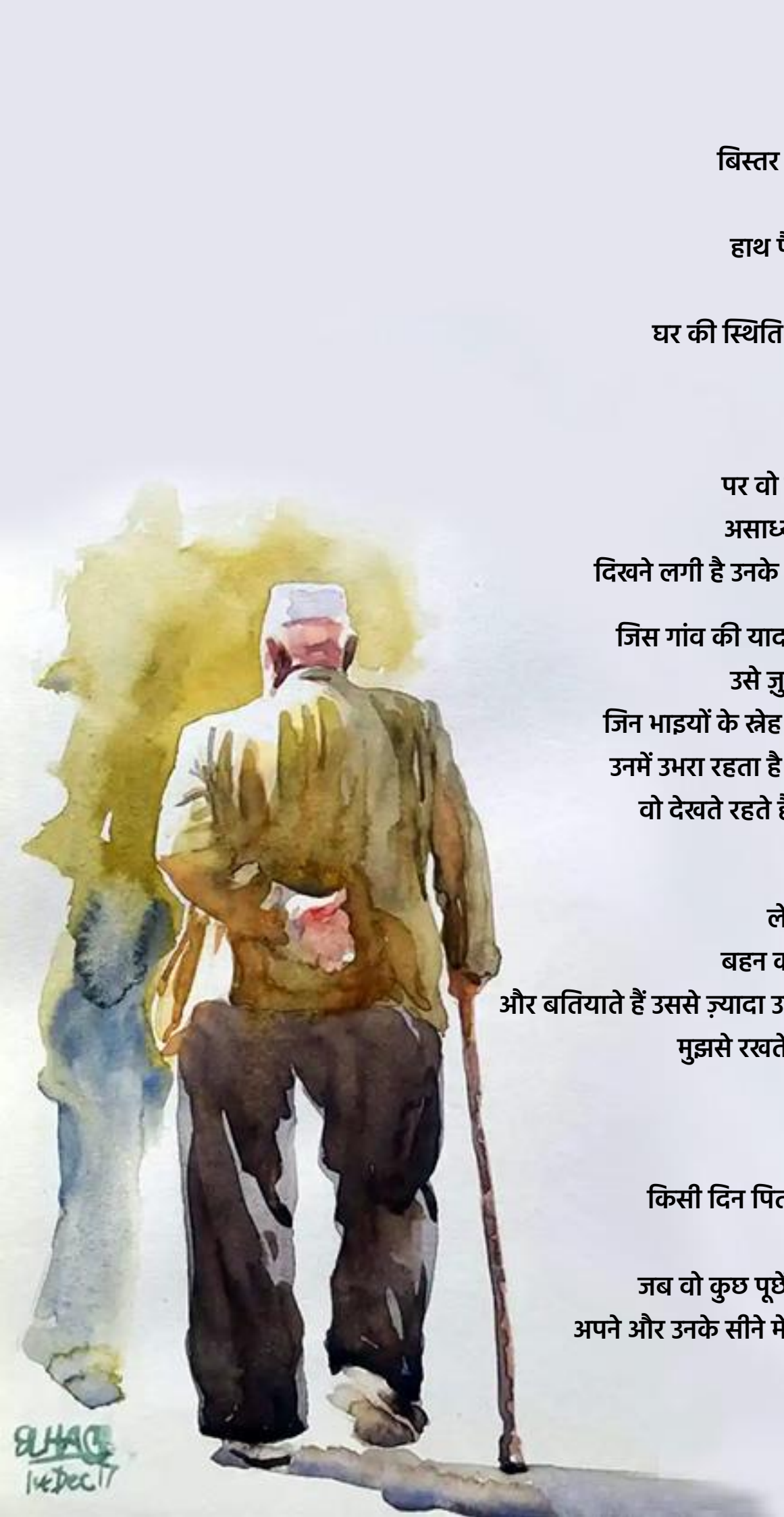

पिता अब थक रहे हैं-
बिस्तर पर रहते हैं कुछ ज़्यादा ही
और बतियाते हैं कम
हाथ पैरों में दर्द बना ही रहता है
कहते तो नहीं कुछ भी पर
घर की स्थिति पर माथा तना ही रहता है

पोते को देख
हुलसते हैं थोड़ा सा
पर वो टिकता कहां है एक जगह
असाध्य बीमारी एक दशक बाद
दिखने लगी है उनके चेहरे पर बन हार की रेखा

जिस गांव की याद कर सुनाते थे घंटों किस्से
उसे ज़ुबान पर भी लाते नहीं अब
जिन भाइयों के स्नेह से लबरेज़ रहती थीं आंखें
उनमें उभरा रहता है मिली उपेक्षा की रूखापन
वो देखते रहते हैं देर तक शून्य में एकटक

मां से बोलते हैं
लेकिन बहुत ज़रूरी होने पर
बहन को लगाते हैं जब तब फ़ोन
और बतियाते हैं उससे ज़्यादा उसकी साल भर की बेटी से
मुझसे रखते हैं लगभग अबोला सा ही
पहले की तरह अनवरत

सोचता हूं
किसी दिन पिता के पास बैठकर पूरे दिन
उन्हें देखता जाऊं और
जब वो कुछ पूछें तो बस सीने पर रख सिर
अपने और उनके सीने में जमी बर्फ़ को पिघलाऊं।

● आलोक कुमार मिश्रा

पृथ्वी

पृथ्वी तुम घूमती हो
तो घूमती चली जाती हो
अपने केंद्र पर घूमने के साथ ही
एक और केंद्र के चारों ओर घूमते हुए लगातार
क्या तुम्हें चक्कर नहीं आते

अपने आधे हिस्से में अंधेरा
और आधे में उजाला लिए
रात को दिन और दिन को रात करते
कभी-कभी कांपती हो
तो लगता है नष्ट कर दोगी अपना सारा घरबार
अपनी गृहस्थी के पेड़ पर्वत शहर नदी गांव टीले
सभी कुछ को नष्ट कर दोगी

पृथ्वी क्या तुम कोई स्त्री हो

तुम्हारी सतह पर कितना जल है
तुम्हारी सतह के नीचे भी जल ही है
लेकिन तुम्हारे गर्भ में
गर्भ के केंद्र में तो अग्नि है
सिर्फ अग्नि

पृथ्वी क्या तुम कोई स्त्री हो

कितने तप कितने दबाव और कितनी आर्द्रता से
अपने कोयलों को हीरों में बदल देती हो
किन प्रक्रियाओं से गुज़र कर
कितने चुपचाप

रत्नों से ज़्यादा रत्नों के रहस्यों से
भरा है तुम्हारा हृदय

पृथ्वी क्या तुम कोई स्त्री हो

तुम घूमती हो
तो घूमती चली जाती हो

• **नरेश सक्सेना**

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

पेड़ अकेला नहीं कटता

कट गया पेड़
पृथ्वी से आकाश तक फैली
कट गई एक दुनिया

पेड़ अकेला नहीं कटता
एक पूरी की पूरी दुनिया
पेड़ के साथ कटती है।

• **दफ़ैरून**

चित्र: Jean-Michel Folon

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

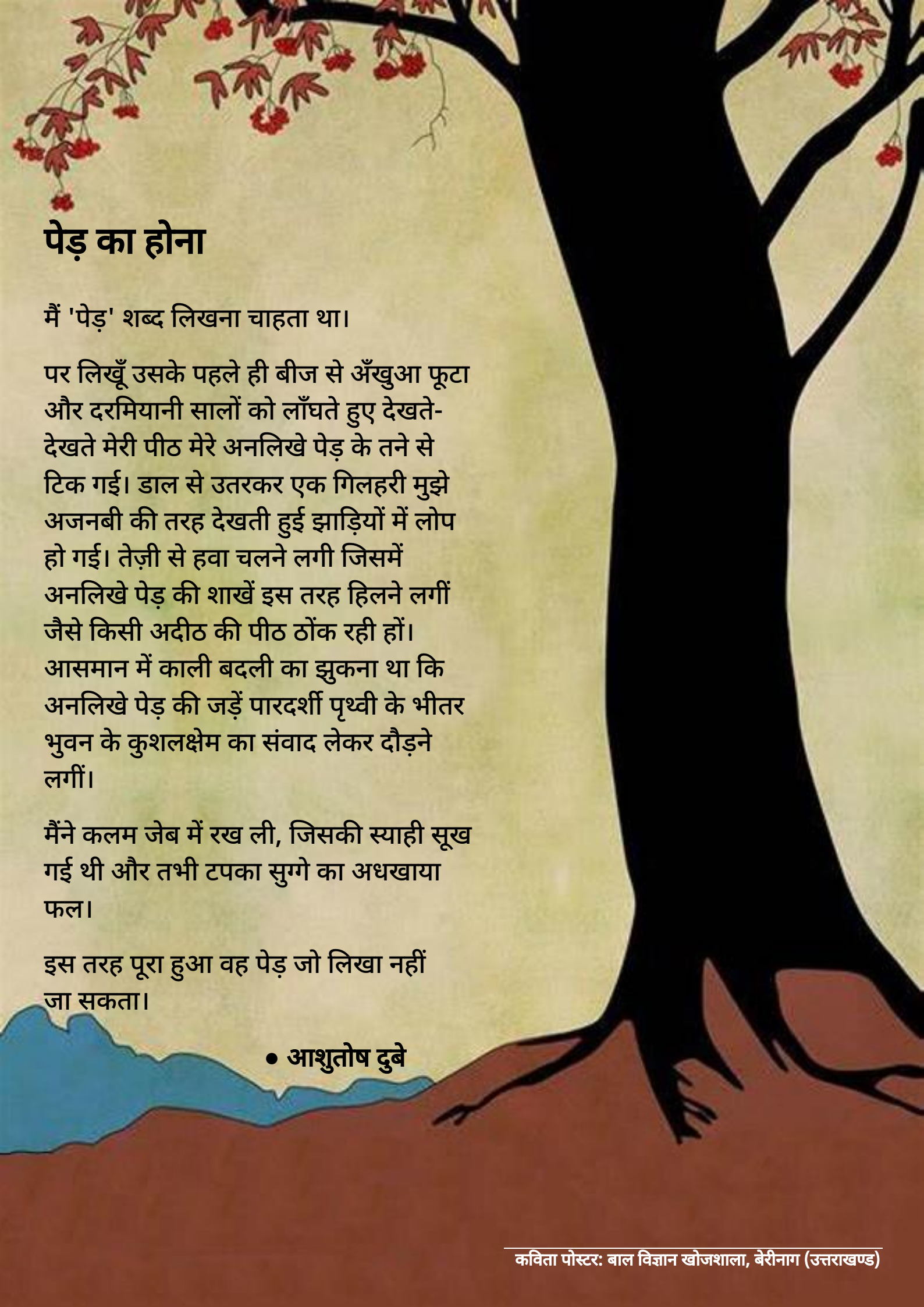

पेड़ का होना

मैं 'पेड़' शब्द लिखना चाहता था।

पर लिखूँ उसके पहले ही बीज से अँखुआ फूटा
और दरमियानी सालों को लाँघते हुए देखते-
देखते मेरी पीठ मेरे अनलिखे पेड़ के तने से
टिक गई। डाल से उतरकर एक गिलहरी मुझे
अजनबी की तरह देखती हुई झाड़ियों में लोप
हो गई। तेज़ी से हवा चलने लगी जिसमें
अनलिखे पेड़ की शाखें इस तरह हिलने लगीं
जैसे किसी अदीठ की पीठ ठोंक रही हों।
आसमान में काली बदली का झुकना था कि
अनलिखे पेड़ की जड़ें पारदर्शी पृथ्वी के भीतर
भुवन के कुशलक्षेम का संवाद लेकर दौड़ने
लगीं।

मैंने कलम जेब में रख ली, जिसकी स्याही सूख
गई थी और तभी टपका सुग्गे का अधखाया
फल।

इस तरह पूरा हुआ वह पेड़ जो लिखा नहीं
जा सकता।

• **आशुतोष दुबे**

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

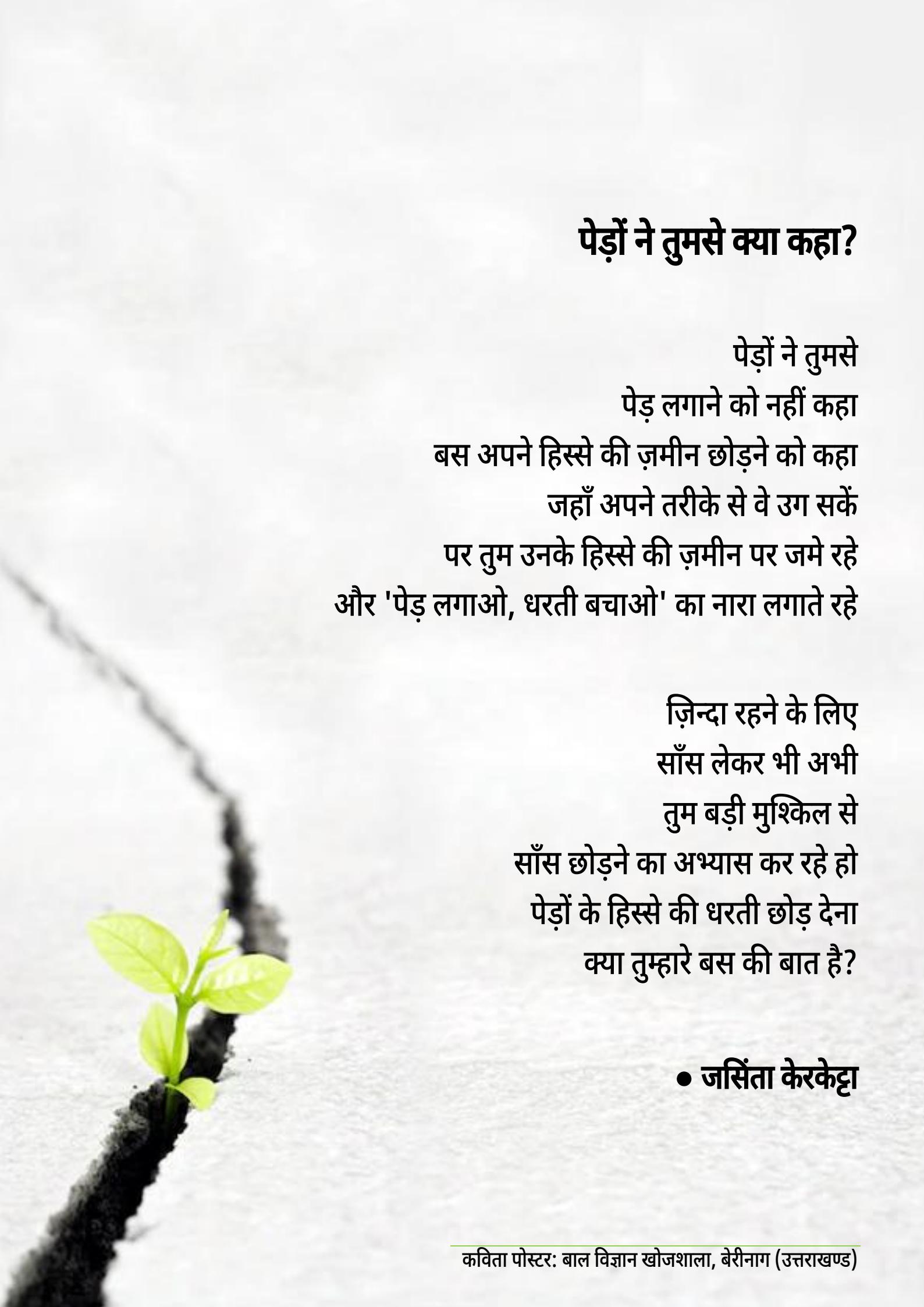

पेड़ों ने तुमसे क्या कहा?

पेड़ों ने तुमसे
पेड़ लगाने को नहीं कहा
बस अपने हिस्से की ज़मीन छोड़ने को कहा
जहाँ अपने तरीके से वे उग सकें
पर तुम उनके हिस्से की ज़मीन पर जमे रहे
और 'पेड़ लगाओ, धरती बचाओ' का नारा लगाते रहे

ज़िन्दा रहने के लिए
साँस लेकर भी अभी
तुम बड़ी मुश्किल से
साँस छोड़ने का अभ्यास कर रहे हो
पेड़ों के हिस्से की धरती छोड़ देना
क्या तुम्हारे बस की बात है?

● **जसिंता केरकेट्टा**

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

॥ प्रतीक्षा ॥

आशुतोष दुबे

एक दिन जब पिता नहीं रहते
सबको पिता बनना होता है

सोते हुए उनकी आँखें अधखुली हैं
उनकी गन्ध पसीने की गन्ध होगी

छत की सेंध से आएगी एक लकीर धूप की
और उनकी चौड़ी पीठ में खुबेगी
मैं बचपन की मुट्ठी में हाथ बढ़ा कर पकड़ूँगा
धूल के कणों को जो उसमें तैर रहे हैं
हाथ में न धूप आएगी न धूल

उनका हाथ उनके सिर के नीचे रहेगा
उन्हें कभी पता ही नहीं चलेगा धूप की उस लकीर का

वे अपनी दुपहर की बेहोशी में सो रहे होंगे
मैं जागता रहूँगा छुटपन की ऊब में

एक दिन अपनी दुपहर में
याद करूंगा उनकी उस दुपहर को
उनके अपने में जागने का इंतज़ार करूँगा।

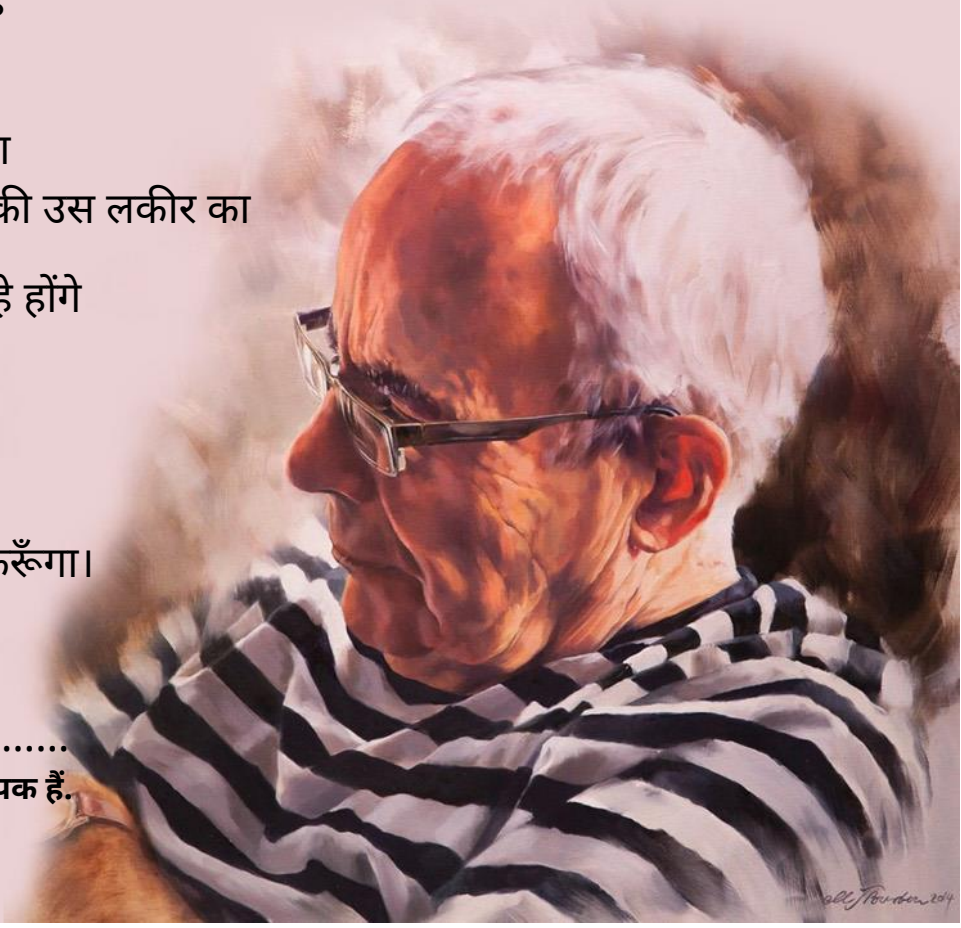

.....

डॉ. आशुतोष दुबे इंदौर में अंग्रेज़ी के प्राध्यापक हैं.

चित्र: My dad, Matthew Burton

प्रवासी पक्षी

कितनी अजीब बात है
कि ठंडे इलाकों से
गर्म इलाकों की तरफ उड़ान भरने वाली
चिड़ियों की अगुवाई
शिशु चिड़ियां करती है
उन्हें जन्म से ही पता होते हैं
वे रास्ते
जो उनके पूर्वजों ने तय किए थे
उन्हें नहीं पता होता तो यह
कि अब गर्म इलाकों में
गर्म नहीं रह गए हैं लोगों के दिल
खून ठंडा पड़ गया है

भयानक हिमपात और कोहरे में डूब चुके हैं
उनके एहसास
इन दिनों उनके रेस्त्रांओं में प्रदर्शित हैं
मेहमान चिड़ियों की सुंदर तस्वीरें
जिन पर रीझे हुए ग्राहकों की
लार ग्रंथियां सक्रिय हो उठी हैं
भाव तय हो चुके हैं
उनके सीने, टांगों और गर्दन के

पर्वतों, जंगलों और रेगिस्तानों को पार करती हुई
वे जहां जा रही हैं ऊष्मा की तलाश में
वहां पिंजरे और छुरियां लिए
बहेलिए उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं

• नरेश सक्सेना

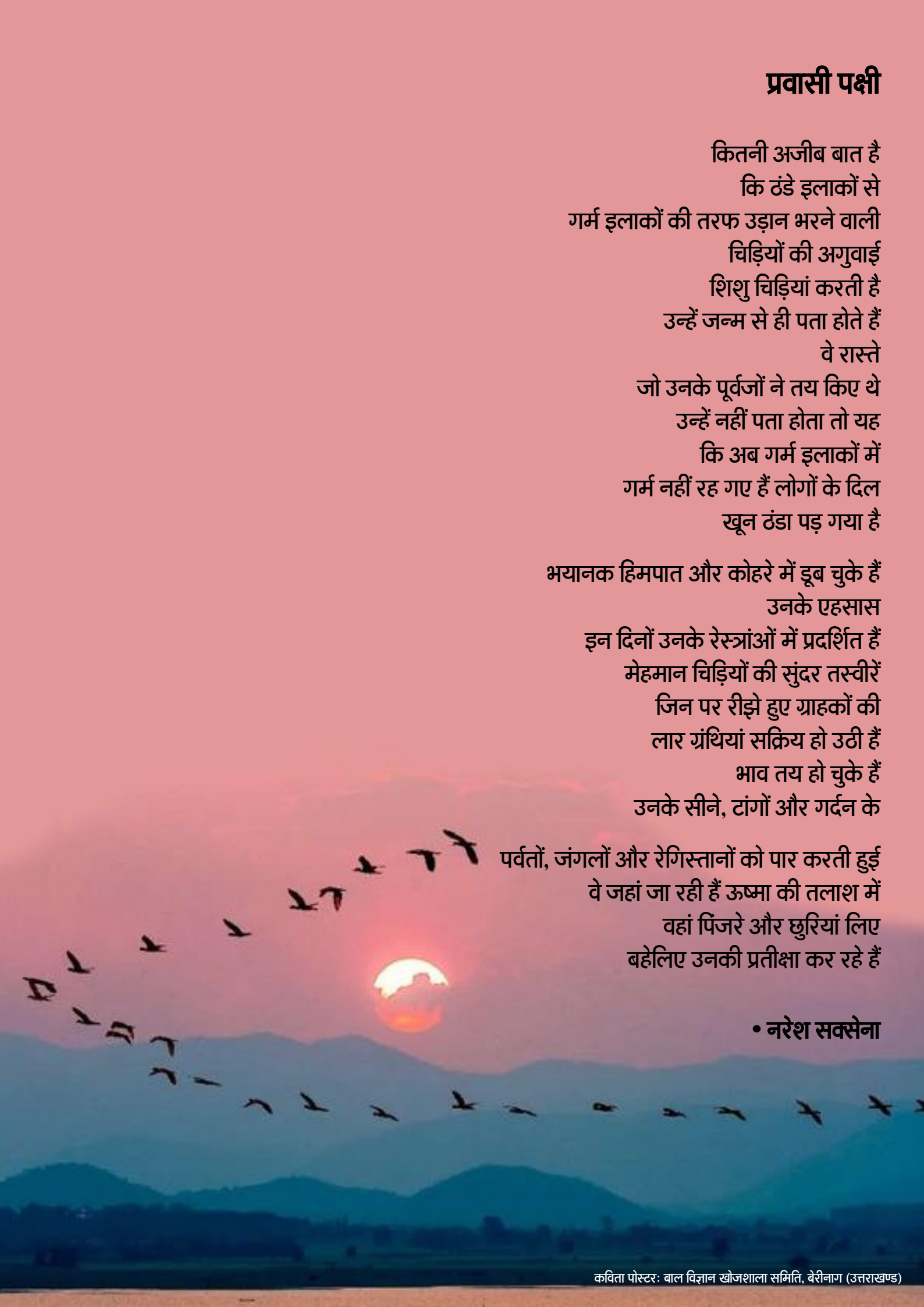

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

प्रेम में दो हो जाना

प्रेम में आदमी
क्यों एक हो जाना चाहता है?
अपनी भिन्नता के साथ
क्यों दो नहीं रह पाता है?
इस एक की चाहत में वह
प्रेम को हथियार में बदलता है
और जीवन-भर
अपने साथी पर हमला करता है
प्रेम कहाँ उसकी ताकत बन पाता है?

इधर देश के प्रेम में कुछ लोग
सबको 'एक' कर देना चाहते हैं
जो 'एक' न हो पाए, वे मारे जाते हैं
प्रेम के नाम पर
सबको एक करने की चाहत में
वे मनुष्य भी नहीं रह पाते हैं

हम प्रेम में हमेशा दो बने रहे
धीरे-धीरे जाना और हर बार
एक-दूसरे को अद्भुत पाया
एक-दूसरे की ताक़त को सराहा
कमियों को रास्ता दिखाया
हमारे रास्ते अलग रहे पर हम साथ चले

कभी-कभी लगता है
वह मुझे, मुझसे ज्यादा जानता है
मैं ख़ुद को ठीक से जानने के लिए
उस तक जाती हूँ और वह
ख़ुद को जानने के लिए मुझ तक आता है।

● जसिंता केरकेट्टा
'प्रेम में पेड़ होना संग्रह' से

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

फँसी हुई लड़कियाँ

फँसी हुई लड़कियाँ!

उसके गाँव-जवार
और मुहल्ले का
आसाध्य और बहुछूत शब्द था ये!

कुछ लड़कियों के तथाकथित प्रेमियों ने
अपने जैसे धूर्त दोस्तों में बैठकर
बेहयाई से प्रेयसी का नाम लेते हुए कहा –
मुझसे फँसी हुई हैं।

उसे नफ़रत थी इस शब्द से
उसने जहाँ भी सुना कि वो लड़की
किसी से फँसी हुई है
उस लड़की के लिए घृणा से उसका मन भर गया
फँसी हुई लड़कियों को देखकर लगा
कि कोई गलीज़ चीज़ देख ली

फिर एक दिन उसे अप्रत्याशित प्रेम हुआ
अब उसके सर्वांग से फूटती थी एक आदिम महक
और आँखें अड़हुल के फूलों की तरह दहकने लगीं

प्रेयस ने उसे बताया –
प्रेम आत्मा का पवित्रतम रूप है
उसने प्रेयसी को
प्रार्थना की सुरीली धुन कहा
वो मगन रही कि वो प्रेयसी है
उसे गर्व हुआ कि वो फँसी हुई लड़की नहीं है
और उसने उन फँसी हुई लड़कियों से और घृणा की

फिर एकदिन उसने सुना,
कोई कह रहा था
उसके प्रेमी का नाम लेकर
कि वो तो फलाँ व्यक्ति से फँसी हुई है

अचानक खुद के लिए ये शब्द सुनकर
घिन, अपमान, दुख और क्रोध जैसी
कितनी सम्वेदनाओं से काँप गयी वो
लगा कि क़स्बे के सबसे गन्दे नाले में ग़लती से आ गिरी

फिर थोड़ी देर सोचकर उसने हँसकर कहा
इतनी भी ख़राब नहीं होतीं फँसी हुई लड़कियाँ!
प्रेम के अभिज्यात्य वैभव का सौभाग्य
और समाहारक हैं ये ही फँसी हुई लड़कियाँ!

● रूपम मिश्र

: कविता पोस्टर :
बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड

फगुनहट मिल गई अचानक

आज सुबह
फगुनहट मिल गई
अचानक कनखियों से मुस्काई और बोली-
'ए - ए - ए
कुछ ठहरो तब बढ़ो आगे
अभी-अभी ताल में नहाई है किशोरी धरती और-
बेपरदा बैठी है धूप में
सुखा रही है लक-दक पीली ओढनी
सरसों के खेत में...

'...उधर बौराने लगे हैं आम
चम्पा का बरन और गोरा हो आया है
गदरा गया है अंग-अंग कलियों का
कल तक खिल जाएंगी टेसू की कलियाँ
बरस पड़ेगा दहकता रंग क्षितिज के आर-पार
भोर से ही घूमने लगेंगी फगुआ गाती टोलियाँ...

'...पर कोयल का कहीं अता-पता नहीं है
न सेमल के गाछ में है, न आम की डाल में
न टेसू के वन में है, न महुए के पेड़ में
न जाने कहाँ चली गई पगली
चलती हूँ, ढूँढ लाती हूँ उसे...'

बेचारी फगुनहट
आगे निकल गई !

मैं कैसे कहता- वह नहीं मिलेगी तुम्हें।
उसे अब क्या पता
कि कब गंधाती है मंजरी
कब बौराते हैं आम
कब कोसाता है महुआ
कब घूमते हैं मदमाते-फगवाते होरिहार...
कोयल तो अब शहर में बस गई है !
मैं कैसे कहता
मैं किसे कहता?
भोली फगुनहट
अब भी ढूँढती फिर रही है
कोयल को, उसकी बोली को... ... ।

• सुरेश पंत

फ़िजूल

फ़िजूल ज़रूरी का पीछा करता रहता है
उसकी जगह पर रखे हुए अपनी नज़र

जो चीज़ें हमने बहुत जतन से सहेजी हैं
उन पर फ़िजूल होने की धूल जम रही है

बड़ी होती सन्तानें माँ-बाप के
फ़िजूल होते जाने की चश्मदीद गवाह हैं
यह सब क्या अटाला इकट्ठा कर रखा है आपने
जगह कहाँ है इसके लिए

व्यर्थ संस्मरणों के लिए कहाँ है समय
माफ़ कीजिए
ज़रूरी काम है जाना है
आँकड़े तैयार करने हैं रिपोर्ट बनानी है जानकारी देनी है
जिन्हें जल्दी से जल्दी फ़िजूल हो जाना है

ज़रूरी दवाइयां भी एक समय के बाद फ़िजूल हैं
जिस तरह डॉक्टर की कोशिशें

कुल को मिला कर लगता है
बहुत वक़्त फ़िजूल किया
मगर तब इसकी कितनी ज़रूरत लगती थी
ज़रूरी समझ कर इकट्ठा किया गया

जीवन के फ़िजूल का अम्बार
धीरे धीरे गिर रहा है जीवन पर

• आशुतोष दुबे

कविता पोस्टरः बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

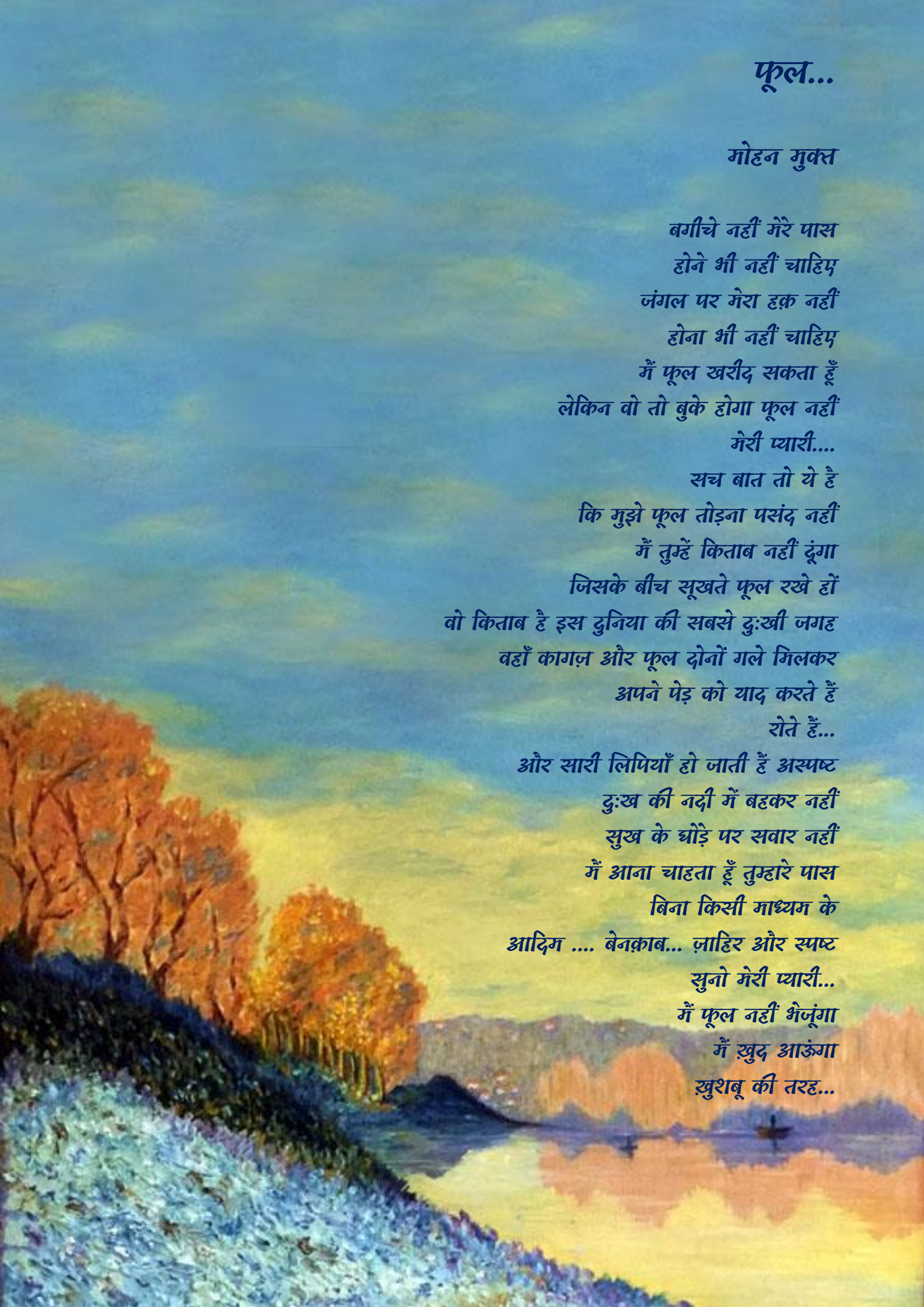

फूल...

मोहन मुक्त

बगीचे नहीं मेरे पास
होने भी नहीं चाहिए
जंगल पर मेरा हक़ नहीं
होना भी नहीं चाहिए
मैं फूल खरीद सकता हूँ
लेकिन वो तो बुके होगा फूल नहीं
मेरी प्यारी....
सच बात तो ये है
कि मुझे फूल तोड़ना पसंद नहीं
मैं तुम्हें किताब नहीं दूंगा
जिसके बीच सूखते फूल रखे हों
वो किताब है इस दुनिया की सबसे दुःखी जगह
वहाँ कागज़ और फूल दोनों गले मिलकर
अपने पेड़ को याद करते हैं
रोते हैं...
और सारी लिपियाँ हो जाती हैं अस्पष्ट
दुःख की नदी में बहकर नहीं
सुख के घोड़े पर सवार नहीं
मैं आना चाहता हूँ तुम्हारे पास
बिना किसी माध्यम के
आदिम .... बेनक़ाब... ज़ाहिर और स्पष्ट
सुनो मेरी प्यारी...
मैं फूल नहीं भेजूंगा
मैं ख़ुद आऊंगा
ख़ुशबू की तरह...

बच्चियां

मुसाफिर हो जाने से
जगह के साथ नाम बदलते हैं
संस्कृति बदलती है
पत्तों की खुशबू बदलती है
धान का रंग बदलता है
मिट्टी में पानी बदलता है
चिड़ियों की आवाज़ बदलती है

बस स्त्रियां एक सी मिलती हैं
सबसे पहले उठकर सबसे बाद में सोने वाली
जंगलों के गीत गाने वाली
भैंस के बच्चे को प्यार देने वाली

बच्चियां भी एक सी ही मिलती हैं
प्यारी, चुलबुली
बेवजह उगने वाली घास जैसी

• गौरांशी चमोली

बच्चों की आँखें

मैं बच्चों से आँखें नहीं मिलाता
या यूँ कहिए कि मैं
बच्चों से आँखें मिला नहीं सकता
क्योंकि उनकी मासूम आँखों में
पुरखे, अतीत व सवाल हैं
वो जवाब माँगती हैं।

वो निर्मल, निष्कपट और निर्भीक हैं
मेरी धूर्त, कपटी, कलुषित और स्वार्थी
आँखों को चकाचौंध करने लगती हैं।

इसलिए, मैं अपने क़द का फ़ायदा उठाता हूँ
और इन बच्चों के बड़ा हो जाने का इंतज़ार करता हूँ
ताकि जब ये बच्चे भी मुझ जैसे
कद्दावर, बलिष्ठ, धूर्त व चतुर हो जाएं
तो बेखटके आँखें बड़े हो चुके बच्चों से मिलाई जाएं।

जब ज़हर से ज़हर कट जाए और बात बराबर की हो
इसलिए मैं बच्चों से आँखें नहीं मिलाता।

• दिनकर अदीब

कविता पोस्टरः बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

बहुत बाद में

कुछ कहना चाहता था
पर सोचा बाद में कहूँगा

पिता के पास
कुछ देर बैठ जाऊँगा
बेटे से प्यार से बात करूँगा
माँ से सुन लूँगा उनके गठिया की तकलीफ़ धीरज से
पत्नी से अकेले में माफ़ी माँग लूँगा

पर बस इतनी-सी देर में
देखता हूँ पिता नहीं हैं अब
बेटा बड़ा होकर दुनिया में निकल चुका
माँ अब कुछ कहती नहीं
और माफ़ी कहीं होती नहीं है

कहने की इच्छा के पल के बाद
कोई बाद नहीं है

यह बहुत बाद में
पता चलता है।

● आशुतोष दुबे

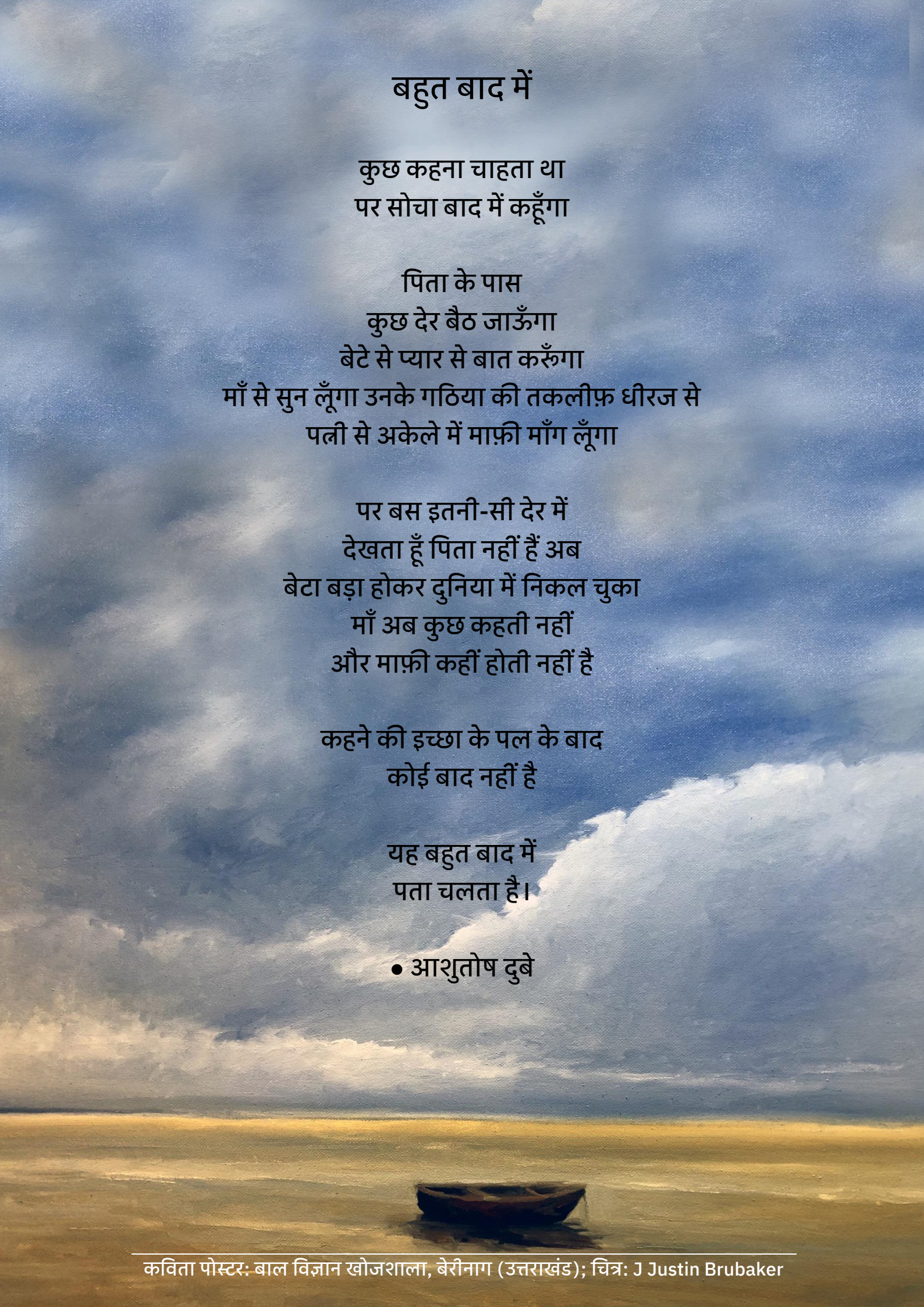

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखंड); चित्र: J Justin Brubaker

बांसुरी

बांसुरी के इतिहास में
उन कीड़ों का कोई ज़िक्र नहीं
जिन्होंने भूख मिटाने के लिए
बांसों में छेद कर दिए थे

और जब-जब हवा उन छेदों से गुज़रती
तो बांसों का रोना सुनायी देता

कीड़ों को तो पता ही नहीं था
कि वे संगीत के इतिहास में हस्तक्षेप
कर रहे हैं
और एक ऐसे वाद्य का आविष्कार
जिसमें बजाने वाले की सांसें बजती हैं

मैंने कभी लिखा था
कि बांसुरी में सांस नहीं बजती
बांस नहीं बजता
बजाने वाला बजता है

अब
जब-जब बजाता हूं बांसुरी
तो राग चाहे जो हो
उसमें कीड़ों की भूख
और बांसों का रोना भी सुनायी देता है

• नरेश सक्सेना

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

बुनी हुई रस्सी

बुनी हुई रस्सी को घुमाएँ उल्टा
तो वह खुल जाती है
और अलग-अलग देखे जा सकते हैं
उसके सारे रेशे

मगर कविता को कोई
खोले ऐसा उल्टा
तो साफ़ नहीं होंगे हमारे अनुभव
इस तरह
क्योंकि अनुभव तो हमें
जितने इसके माध्यम से हुए हैं
उससे ज़्यादा हुए हैं दूसरे माध्यमों से,
व्यक्त वे ज़रूर हुए हैं यहाँ

कविता को
बिखरा कर देखने से
सिवा रेशों के क्या दिखता है
लिखने वाला तो
हर बिखरे अनुभव के रेशे को
समेट कर लिखता है!

• भवानीप्रसाद मिश्र

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

दोराहा

(बेटी ज़ोया के नाम)

ये जीवन इक राह नहीं
इक दोराहा है

पहला रस्ता बहुत सरल है
इसमें कोई मोड़ नहीं है
ये रस्ता इस दुनिया से बेजोड़ नहीं है
इस रस्ते पर मिलते हैं रिश्तों के बंधन
इस रस्ते पर चलने वाले
कहने को सब सुख पाते हैं
लेकिन
टुकड़े टुकड़े होकर
सब रिश्तों में बँट जाते हैं
अपने पल्ले कुछ नहीं बचता
बचती है बेनाम सी उलझन
बचता है साँसों का ईंधन
जिसमें उनकी अपनी हर पहचान
और उनके सारे सपने
जल बुझते हैं
इस रस्ते पर चलनेवाले
ख़ुद को खोकर जग पाते हैं

ऊपर-ऊपर तो जीते हैं
अंदर-अंदर मर जाते हैं

दूसरा रस्ता बहुत कठिन है
इस रस्ते में कोई किसी के साथ नहीं है
कोई सहारा देनेवाला हाथ नहीं है
इस रस्ते में धूप है
कोई छाँव नहीं है
जहाँ तसल्ली भीख में दे दे कोई किसी को
इस रस्ते में ऐसा कोई गाँव नहीं है
ये उन लोगों का रस्ता है
जो ख़ुद अपने तक जाते हैं
अपने आपको जो पाते हैं
तुम इस रस्ते पर ही चलना

मुझे पता है
ये रस्ता आसान नहीं है
लेकिन मुझको ये ग़म भी है
तुमको अब तक
क्यूँ अपनी पहचान नहीं है

• जावेद अख्तर

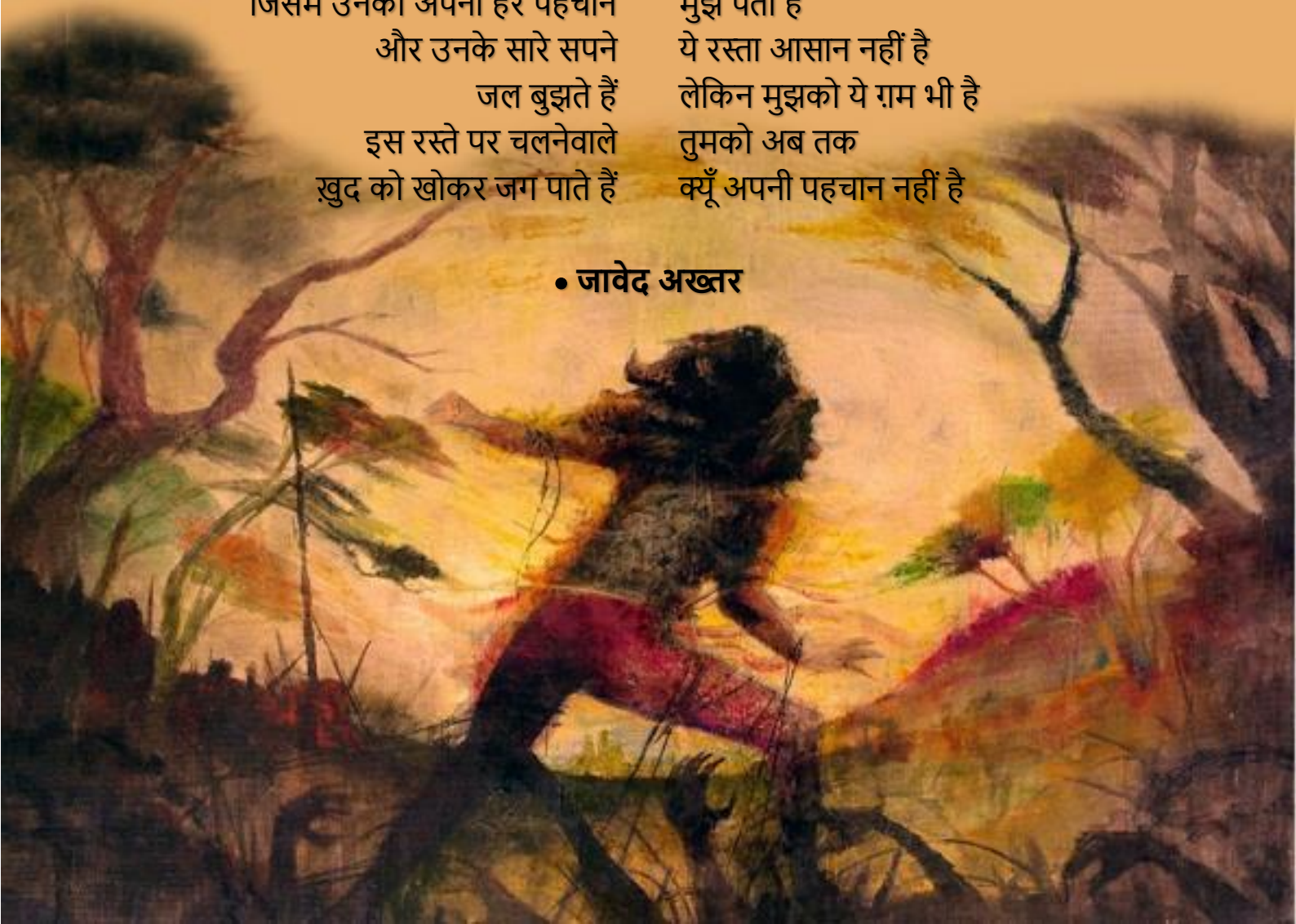

भाषा में पुकारे जाने से पहले वह एक चिड़िया थी बस

और चिड़िया भी उसे हमारी भाषा ने ही कहा
भाषा ही ने दिया उस पेड़ को एक नाम
पेड़ हमारी भाषा से परे सिर्फ एक पेड़ था
और पेड़ भी हमारी भाषा ने ही कहा उसे
इसी तरह वे असंख्य नदियाँ झरने और पहाड़
कोई भी नहीं जानता था शायद
कि हमारी भाषा उन्हें किस नाम से पुकारती है

उन्हें हमारी भाषा से कोई मतलब न था
भाषा हमारी सुविधा थी
हम हर चीज़ को भाषा में बदल डालने को उतावले थे
जल्दी से जल्दी हर चीज़ को भाषा में पुकारे जाने की ज़िद
हमें उन चीज़ों से कुछ दूर ले जाती थी
कई बार हम जिन चीज़ों के नाम जानते थे
उनके आकार हमें पता नहीं थे
हम सोचते थे कि भाषा हर चीज़ को जान लेने का दरवाज़ा है
इसी तर्क से कभी-कभी कुछ भाषाएं अपनी सत्ता कायम कर लेती थीं
कमज़ोरों की भाषा कमज़ोर मानी जाती थी और वह हार जाती थी
भाषाओं के अपने अपने अहंकार थे

पता नहीं पेड़ों, पत्थरों, पक्षियों, नदियों, झरनों, हवाओं और जानवरों के पास
अपनी कोई भाषा थी कि नहीं
हम लेकिन लगातार एक भाषा उनमें पढ़ने की कोशिश करते थे
इस तरह हमारे अनुमान उनकी भाषा गढ़ते थे
हम सोचते थे कि हमारा अनुमान ही सृष्टि की भाषा है
हम सोचते थे कि इस भाषा से
हम पूरे ब्रह्मांड को पढ़ लेंगे

रचना: राजेश जोशी
कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग

भाषा से बाहर

वृक्षों के पास यदि शब्द होते
तो वे हमें फल नहीं देते
शब्द ही देते शायद

बादल तो
पूरी कविता ही दे देते बारिश पर
पानी की एक बूँद नहीं देते

फूल दे देते सौन्दर्य पर एक लेख
ख़ुशबू और पराग का एक कण नहीं देते

धरती के पास भी होते यदि शब्द
तो वह भी शायद
फ़सलों से भरी
कहानी का पाठ करने लगती

भूख से बेहोश होते आदमी की चेतना में
शब्द नहीं
अन्न के दाने होते होंगे
अन्न का स्वाद होता होगा
अन्न की ख़ुशबू होती होगी

बेहतर हो
कुछ दिनों के लिए हम लौट चलें
उस समय में
जब मनुष्यों के पास भाषा नहीं थी
और हर बात
कहके नहीं, करके दिखानी होती थी

● नरेश सक्सेना

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

भेड़-चाल

तिब्बत से लेकर
भाबर तक
एक पड़ाव से दूसरे पड़ाव तक
हमेशा कतार में चलती आयी हैं भेड़ें

गड्यो बकौर के पांव से
पांव मिलाते हुए
ऐसे ही वे दुर्गम चट्टानों, नदियों,
कमर तक बर्फ़ को
पार कर जाती हैं

ऐसे ही पहाड़ के जीवन में
मिलता है पांव, एक से दूसरे के साथ
और बन जाता है एक चक्रव्यूह
जिसे कोई भी कठिनाई भेद नहीं पाई है
अनन्त कालखण्डों से

कदम से कदम मिलाना ही
हमारी संस्कृति है
जो हमने भेड़ों से सीखी है।

● धर्मेन्द्र सिंह

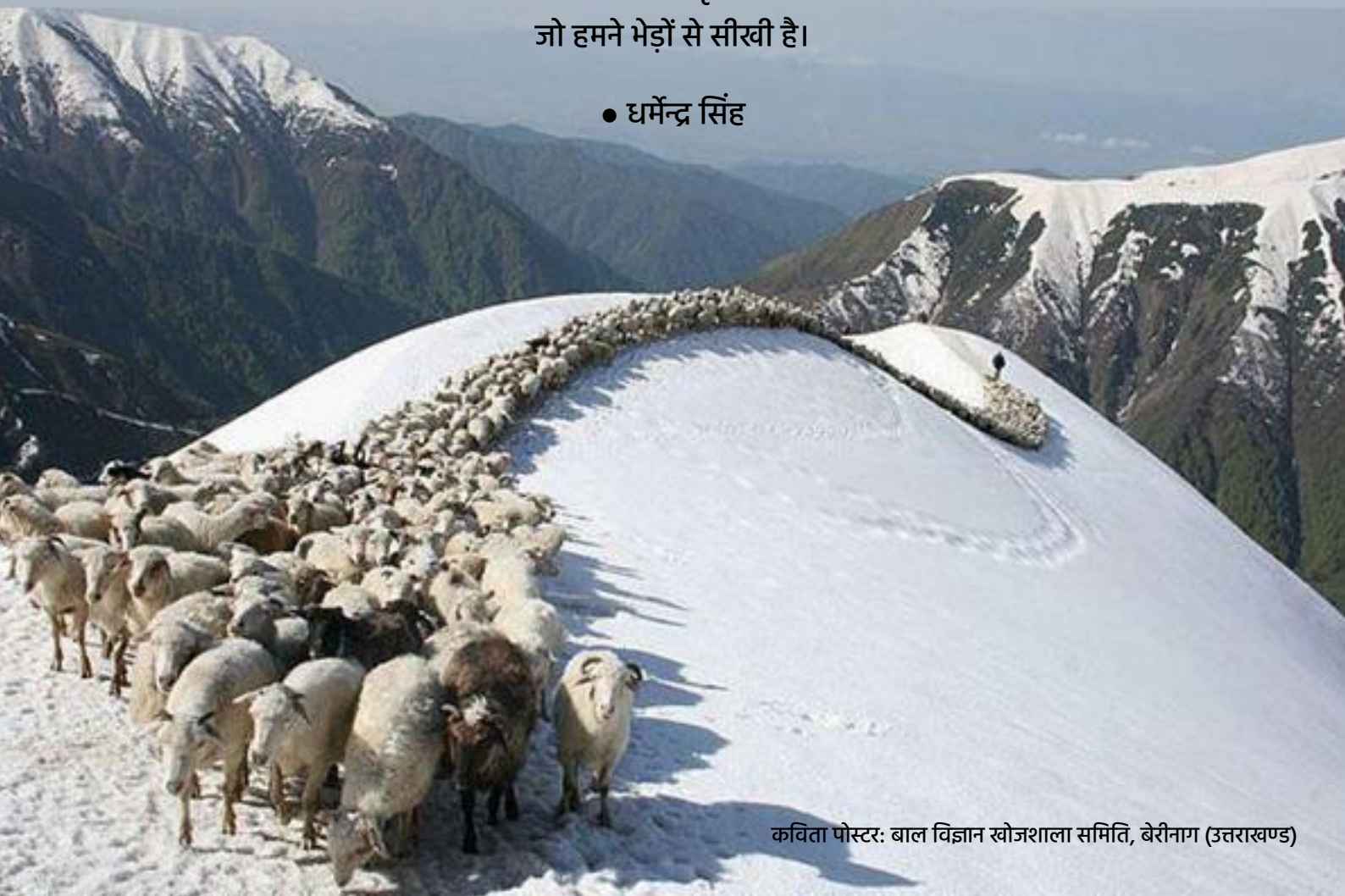

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

मछलियाँ

मछलियों को लगता था
कि जैसे वे तड़पती हैं पानी के लिए
पानी भी उनके लिए तड़पता होगा
लेकिन जब खींचा जाता है जाल
तो पानी मछलियों को छोड़कर
जाल से निकल भागता है

पानी मछलियों का देश है
लेकिन मछलियाँ
अपने देश के बारे में कुछ नहीं जानतीं...

● नरेश सक्सेना

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड); चित्र: *Emily Cammarata*

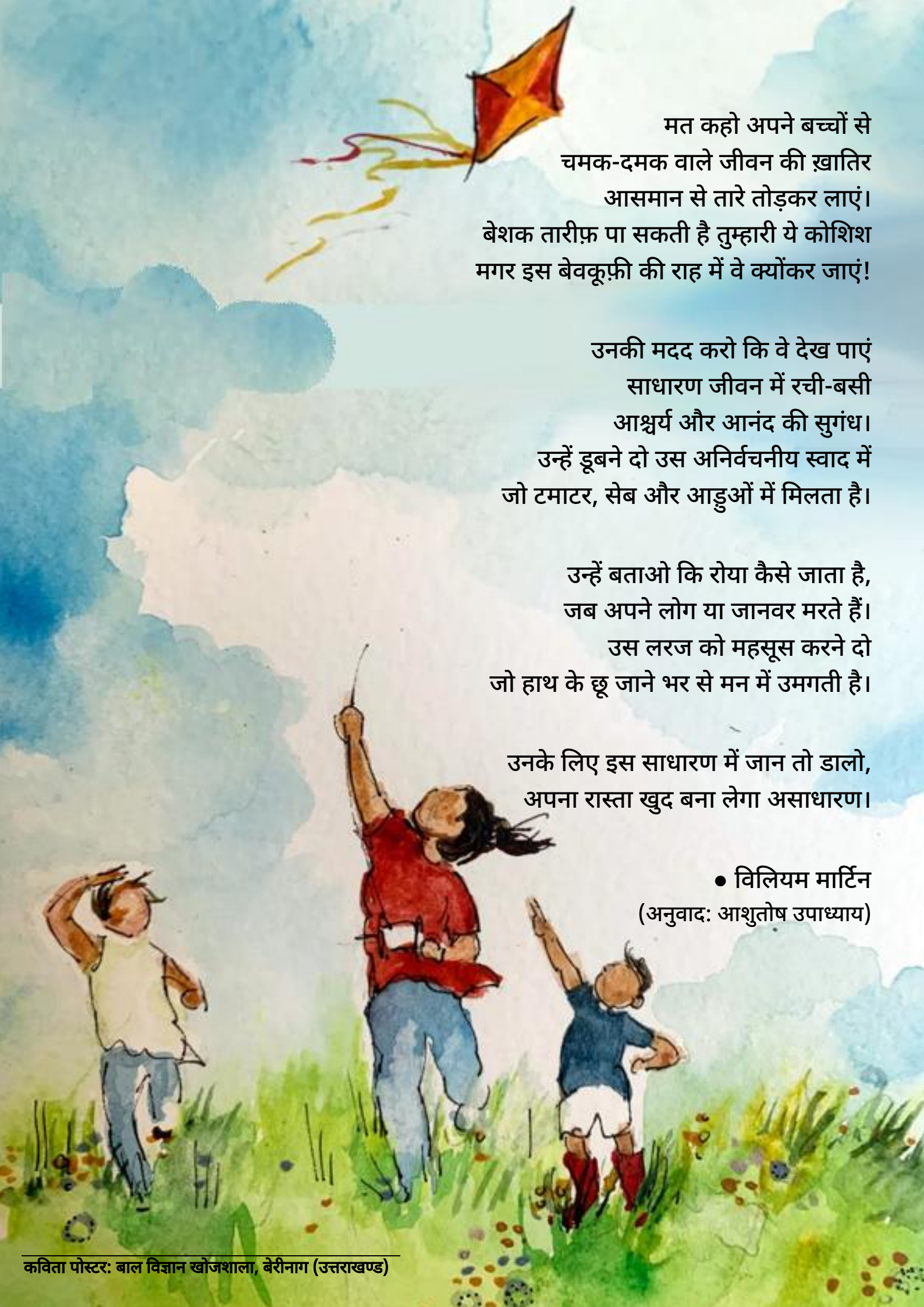

मत कहो अपने बच्चों से
चमक-दमक वाले जीवन की ख़ातिर
आसमान से तारे तोड़कर लाएं।
बेशक तारीफ़ पा सकती है तुम्हारी ये कोशिश
मगर इस बेवकूफ़ी की राह में वे क्योंकर जाएं!

उनकी मदद करो कि वे देख पाएं
साधारण जीवन में रची-बसी
आश्चर्य और आनंद की सुगंध।
उन्हें डूबने दो उस अनिर्वचनीय स्वाद में
जो टमाटर, सेब और आड़ुओं में मिलता है।

उन्हें बताओ कि रोया कैसे जाता है,
जब अपने लोग या जानवर मरते हैं।
उस लरज को महसूस करने दो
जो हाथ के छू जाने भर से मन में उमगती है।

उनके लिए इस साधारण में जान तो डालो,
अपना रास्ता खुद बना लेगा असाधारण।

● विलियम मार्टिन
(अनुवाद: आशुतोष उपाध्याय)

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

मतलब ही क्यों हो हर बात का,
कोई बात कभी बेमतलब भी तो हो

सबब ही क्यों हो हर मुलाक़ात का
मुलाक़ात कभी बेसबब भी तो हो

इंतज़ार ही क्यों रहे क़िस्मत में हमेशा
बात उनसे आज, अभी, अब भी तो हो

हर शाम मामूली हर सुबह बासी ही क्यों
कोई दिन जादुई और ग़ज़ब भी तो हो

महफ़िलों में शरीफ़ और बाअदब ही क्यों
उनके बीच कोई सीधा-सच्चा बेढब भी तो हो

हर शौक़ के पीछे कोई चस्का ही क्यों
कोई तो शौक़ कभी बिना तलब भी तो हो

जाने पहचाने से लगने लगे हैं मुद्दे अब सभी
नया मुद्दा कोई ताज़ा और अजब भी तो हो

किसी सोच में सभी न जाने क्यों पड़ गये हैं
मासूम हँसी का दीदार किसी लब भी तो हो

● दिनकर अदीब

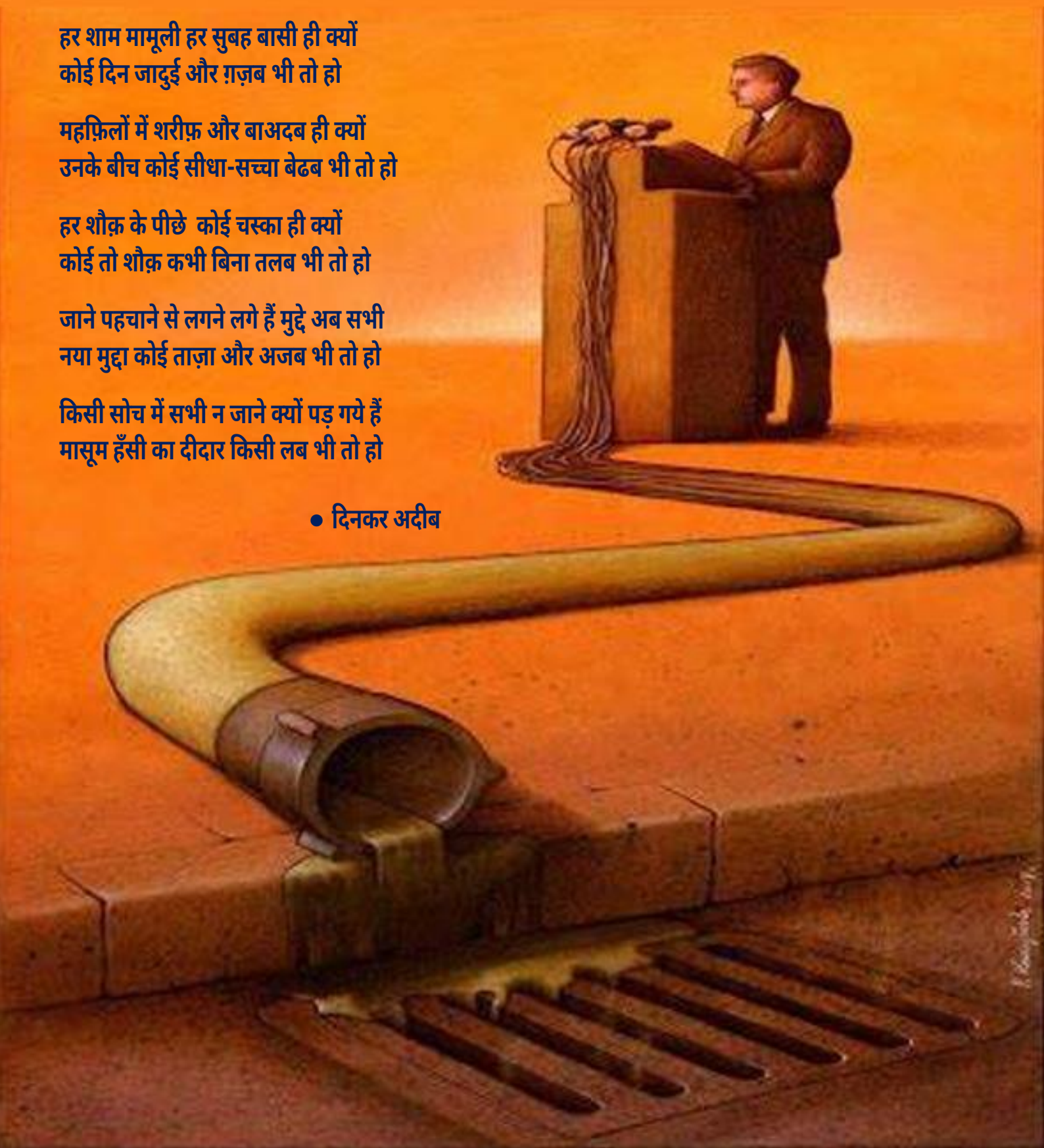

॥ मरणासन्न ॥

मरते हुए आदमी से क्या कह पाते हैं आप ?
क्या कह पाता है मरता हुआ आदमी आपसे ?

क्या आप कह सकते हैं
जाने का पल आ गया है
अब बिना मुड़े, बिना पीछे देखे
बिना किसी पछतावे के जाइए

या कहेंगे थोड़ा मुस्कुराने की कोशिश करते हुए
कि जल्दी अच्छे हो जाइए आप
अभी तो आपको बहुत कुछ करना देखना है

तमाम शब्द गले, ज़ुबान और होठों के बीच
रेत के किसी दलदल में फ़ँस जाते हैं

आप उसे देखते रहते हैं

उसका मुश्किल से साँस लेना
उसकी आँखों में उजाले और अँधेरे का वह खेल
उसकी बेचैनी और फिर उस बेचैनी से लड़ने की छटपट

आपका हाथ थामे रहता है उसका हाथ
जो बस दरकती हुई चमड़ी से मढ़ी हड्डी भर रह गया है
और बहुत मुलायम है
और जिसमें ऊष्मा की आखिरी किस्त का स्पर्श है

आपका हाथ उसके हाथ को थामता है
और वही करता है तमाम आखिरी बातें

आप तो जितने ख़ामोश गए थे
उससे भी ज़्यादा ख़ामोश लौट आते हैं

- आशुतोष दुबे

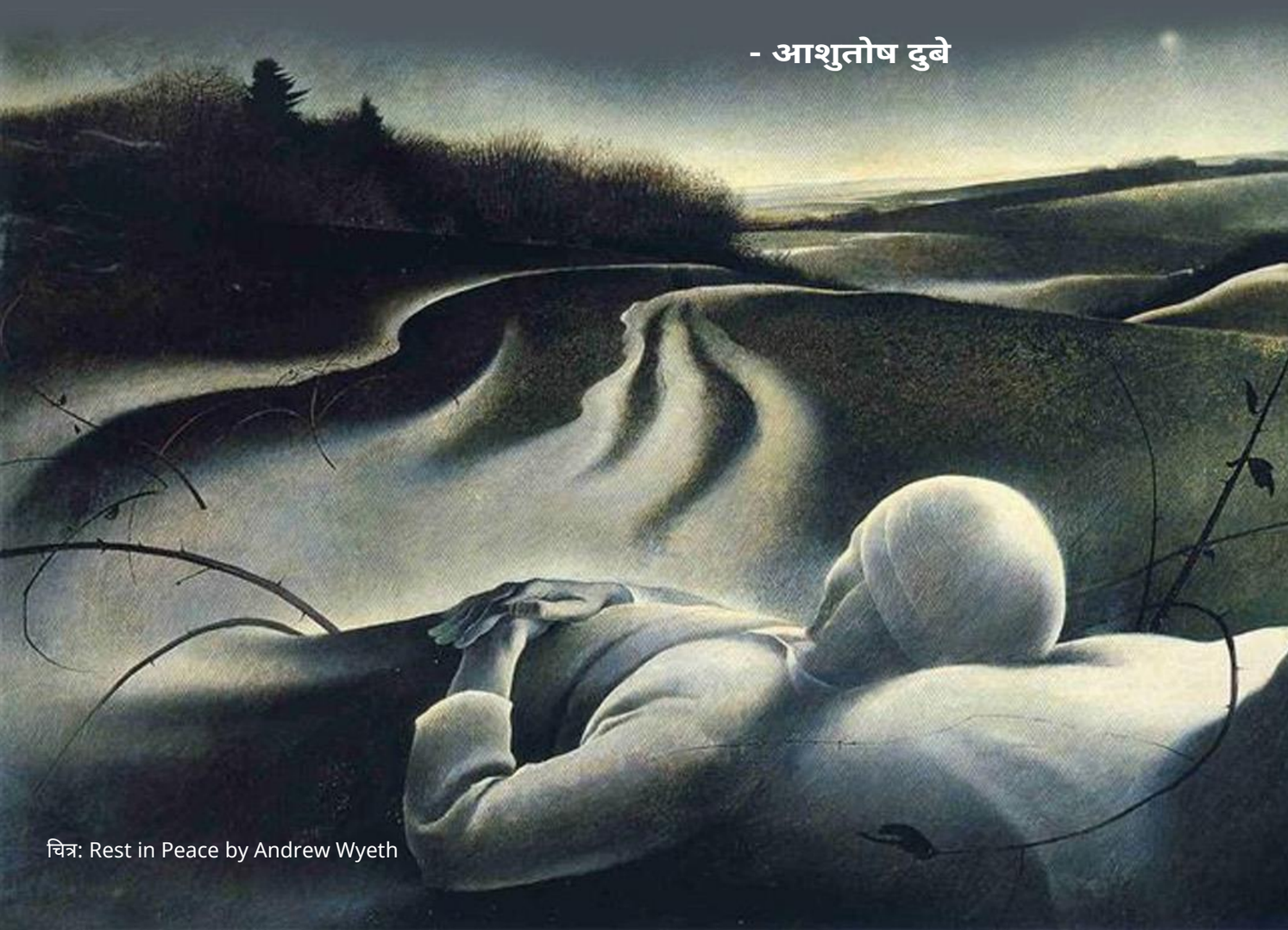

चित्र: Rest in Peace by Andrew Wyeth

मरना तो है ही एक दिन

मरना तो है ही एक दिन
अब मरने से क्या डरना

मरना है तो लड़कर मरना
सही बात पर अड़कर मरना
दुश्मन के निर्मम चहरे पर
एक तमाचा जड़कर मरना

भेद नदी का पाना हो
तो पुल पर पाँव न धरना
कसना कमर और धीरज धर
धारा बीच उतरना
भँवर और घड़ियाल मिलेंगे
शैवालों के जाल मिलेंगे
धारा का आवेग और
लहरों के कठिन सवाल मिलेंगे
बिन डूबे कैसे जानोगे, क्या है पार उतरना

मरना है तो प्यार में मरना
दुश्मन को ललकार के मरना
अपना प्रेम पुकार के मरना
मरना हो तो समर में
घर में तिल-तिलकर क्या मरना
मरना तो है ही एक दिन
अब मरने से क्या डरना

• नरेश सक्सेना

मुख्यधारा

अभी तो लगता है,
पारसी सिर्फ अपने बैंक खातों में
दर्ज आंकड़ों से खेलते होंगे
लेकिन सौ साल भी नहीं गुजरे
देश में अंग्रेजों के जोड़ का
क्रिकेट खेलने वाले वे अकेले थे

बॉलीवुड की जन्मकुंडली में पड़ा
'पारसी थियेटर' वे ही चलाते थे
और पहली फुर्सत में भारत की
आजादी का आर्थिक सिद्धांत भी
लंदन से लिखकर भेज देते थे

फिर एक दिन आजादी आ गई
और पचास साल के अंदर ही
पारसी, यहूदी, आर्मीनियाई
एक हवाई किले में बंद हो गए

जिन भी चीजों से सत्ता बनती थी
सारी की सारी ऐसे लोगों के पास गईं
जो न रचना जानते थे, न कुछ खेलते थे
न आजादी में उनकी कोई दिलचस्पी थी

इस तरह उभरी हमारे देश की मुख्यधारा
जिसने देश की पहली आदिवासी राष्ट्रपति को
वेदमंत्रों के अनवरत पाठ के बीच एक शाम
वैचारिक वन से निकाल कर भवन में पहुंचाया
उसी भवन में, जहां से विदा होते हुए
पिछले वाले 'दलित राष्ट्रपति'
ऐन सामने हाथ जोड़े ताकते रहे
प्रधानमंत्री ने उन्हें देखा तक नहीं

तीन दिन कैमरा उड़ीसा से दिल्ली तक नाचा
340 कमरे गिना दिए, 'वनवासी' नहीं बोला
बोलेगा, आदिवासी क्षेत्रों में चुनाव के वक्त
जैसे पिछले को कुछ दिन 'कोली' कहा था

यही है हमारी मटमैली मुख्यधारा
जिसकी कोई सहायक धारा नहीं है
जो बाढ़ के पानी की तरह बस्तियों में बहती है
और मैले के रंग में ही सारा कुछ रंग डालती है

यहां जैन भी त्रिशूलधारी दिखना चाहते हैं
बौद्ध-सिक्ख दलाल काम पर लग चुके हैं
कुक्कड़ चबा रहे हिंदू 'हैं तो शाकाहारी'
और मुसलमान-ईसाई का तुक
भाई-भाई से ऊपर वाले ने ही जोड़ रखा है

इस तरह बनती जा रही है हमारी मुख्यधारा
जैसे बे-सरोसामान कोई ऐसी दुकान
जिसके टूटे शटर पर मोटे काले ब्रश से लिखा है-
नक्कालों से सावधान, हमारी कोई ब्रांच नहीं है।

● चंद्रभूषण

Painting: Ella Dwyer

मैं झुकता हूँ

दरवाज़े से बाहर जाने से पहले
अपने जूतों के तस्मे बाँधने के लिए मैं झुकता हूँ

रोटी का कौर तोड़ने और खाने के लिए
झुकता हूँ अपनी थाली पर

जेब से अचानक गिर गई क़लम या सिक्के को उठाने को
झुकता हूँ

झुकता हूँ लेकिन उस तरह नहीं
जैसे एक चापलूस की आत्मा झुकती है

किसी शक्तिशाली के सामने
जैसे लज्जित या अपमानित होकर झुकती हैं आँखें

झुकता हूँ
जैसे शब्दों को पढ़ने के लिए आँखें झुकती हैं

ताक़त और अधीनता की भाषा से बाहर भी होते हैं
शब्दों और क्रियाओं के कई अर्थ

झुकता हूँ
जैसे घुटना हमेशा पेट की तरफ़ ही मुड़ता है

यह कथन सिर्फ़ शरीर के नैसर्गिक गुणों
या अवगुणों को ही व्यक्त नहीं करता

कहावतें अर्थ से ज़्यादा अभिप्राय में निवास करती हैं।

• राजेश जोशी

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

यात्रा...

यात्रा करने की कोशिश करो,
वरना
तुम नस्लवादी हो सकते हो,
और शायद यह मानने लगो
कि तुम्हारी ही चमड़ी सही है,
कि तुम्हारी भाषा ही सबसे रोमांटिक है,
और कि तुम ही सबसे पहले
प्रथम थे।

यात्रा करो,
क्योंकि अगर तुम यात्रा नहीं करोगे तो
तुम्हारे विचार परिपक्व नहीं होंगे,
नई दृष्टियों से नहीं सजेंगे।
तुम्हारे सपने कमज़ोर टांगों के साथ जन्मेंगे
और फिर तुम टीवी-शोज़ पर विश्वास करने लगोगे,
और उन पर जो ऐसे दुश्मन गढ़ते हैं
जो तुम्हारे डरावने सपनों में बिल्कुल फिट बैठते हैं
ताकि तुम आतंक के साए में जिओ।

यात्रा करो,
क्योंकि यात्रा सिखाती है
सबको सुप्रभात कहना,
इस बात की परवाह किए बिना
कि हम किस सूरज की तरफ़ से आते हैं।

यात्रा करो,
क्योंकि यात्रा सिखाती है
सबको शुभरात्रि कहना,
उस अँधेरे की परवाह किए बिना
जो हम अपने भीतर ढोते हैं।

यात्रा करो,
क्योंकि यात्रा सिखाती है प्रतिरोध करना,
न कि निर्भर रहना,
दूसरों को स्वीकार करना,
न सिर्फ़ उसके लिए कि वे कैसे हैं,
बल्कि उसके लिए भी जो वे कभी नहीं हो सकते।
यह जानने के लिए कि हम कितने समर्थ हैं-
एक परिवार का हिस्सा महसूस करने के लिए-
सीमाओं से परे,
परंपराओं और संस्कृति से परे।
यात्रा हमें "परे" होना सिखाती है।

यात्रा करो,
वरना तुम यह मान बैठोगे
कि तुम सिर्फ़ एक नज़ारे के लिए बने हो,
जबकि तुम्हारे भीतर
अभी तक देखे जाने का इंतज़ार कर रहे
जाने कितने अद्भुत नज़ारे मौजूद हैं।

● **जियो एवन**
इतालवी कवि और गीतकार
(अनुवाद : आशुतोष उपाध्याय)

ये तब की बात है

ये तब की बात है
जब लोग प्रेम में
सफल होने के लिए नहीं
प्रेम की स्मृति में
घर बनाने के लिए
प्रेम करते थे

वे प्रेम नहीं करते थे
प्रेम का एक गल्प रचते थे
निर्द्वन्द्व उसमें रहते थे

ये तब की बात है
जब प्रेमीजन देवदास देख-पढ़
तड़प-तड़प जाते थे

प्रेम करने वाले
प्रेमिकाओं की शादी में
दौड़-दौड़ काम करते थे

यथासमय ब्याह कर
अपना घर बसाते थे

प्रेम की स्मृति के घर में
अक्सर चले जाते थे

यथासमय लौट आते थे

● आशुतोष दुबे

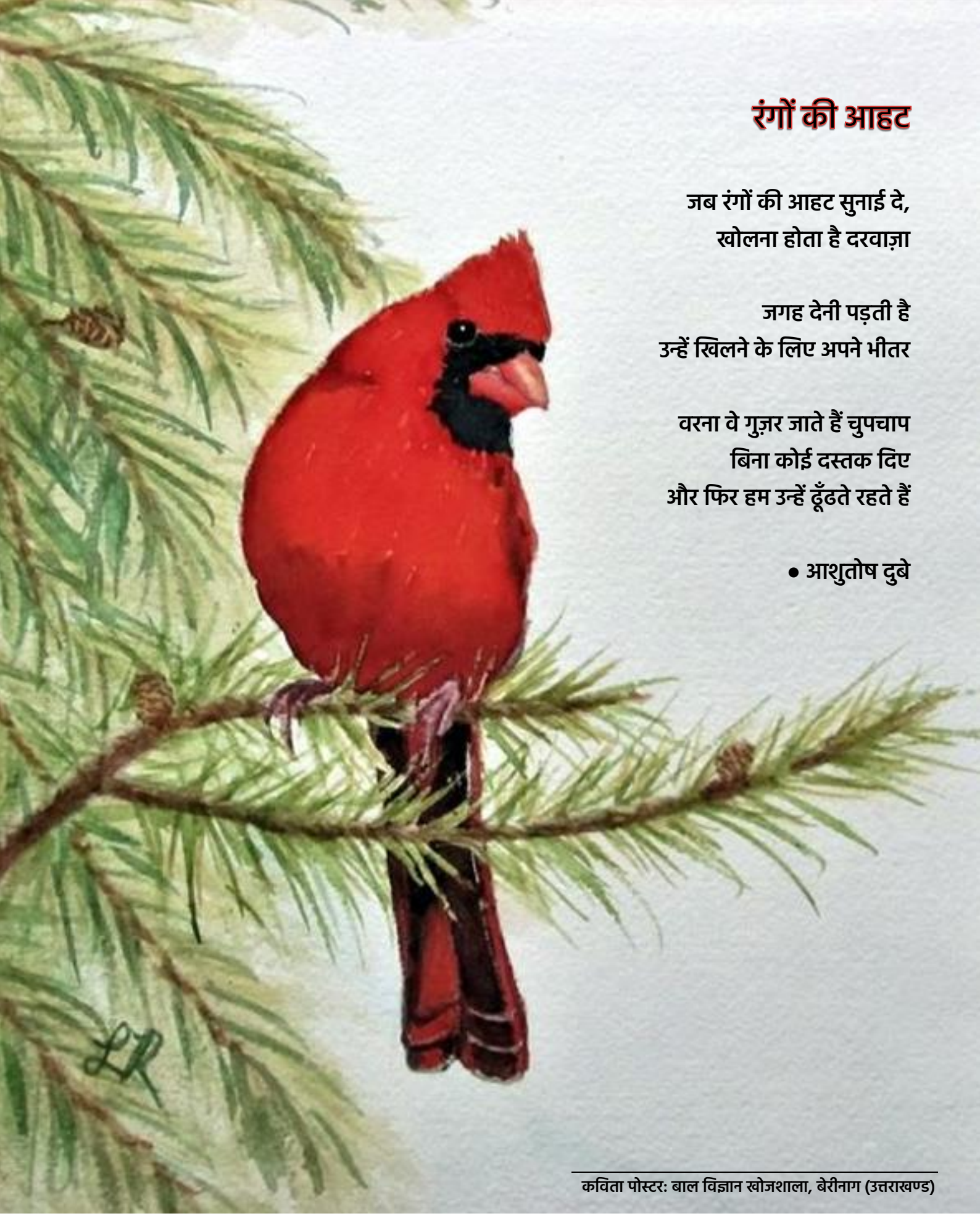

रंगों की आहट

जब रंगों की आहट सुनाई दे,
खोलना होता है दरवाज़ा

जगह देनी पड़ती है
उन्हें खिलने के लिए अपने भीतर

वरना वे गुज़र जाते हैं चुपचाप
बिना कोई दस्तक दिए
और फिर हम उन्हें ढूँढते रहते हैं

● आशुतोष दुबे

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

लुप्त प्रजाति की दुनिया

एक पेड़ था
डूब गया जिसका बीज

उसकी डाल पर बैठती थी एक चिड़िया
जो अब किसी घोंसले में नहीं लौटती

एक जानवर था
जो उस पेड़ के तने से रगड़ता था अपनी खाल
कालपात्र में रखा है उसका जीवाश्म

एक मनुष्य था
जो सोता था दुपहरी में उस पेड़ के नीचे
उसकी जड़ों पर सिर रखकर
खुदाई में मिलेंगी
उसकी पथराई हुई हड्डियाँ

एक पूरी दुनिया थी
उस पेड़ के आसपास

कहाँ मिलेगा उसका बीज!

● आशुतोष दुबे

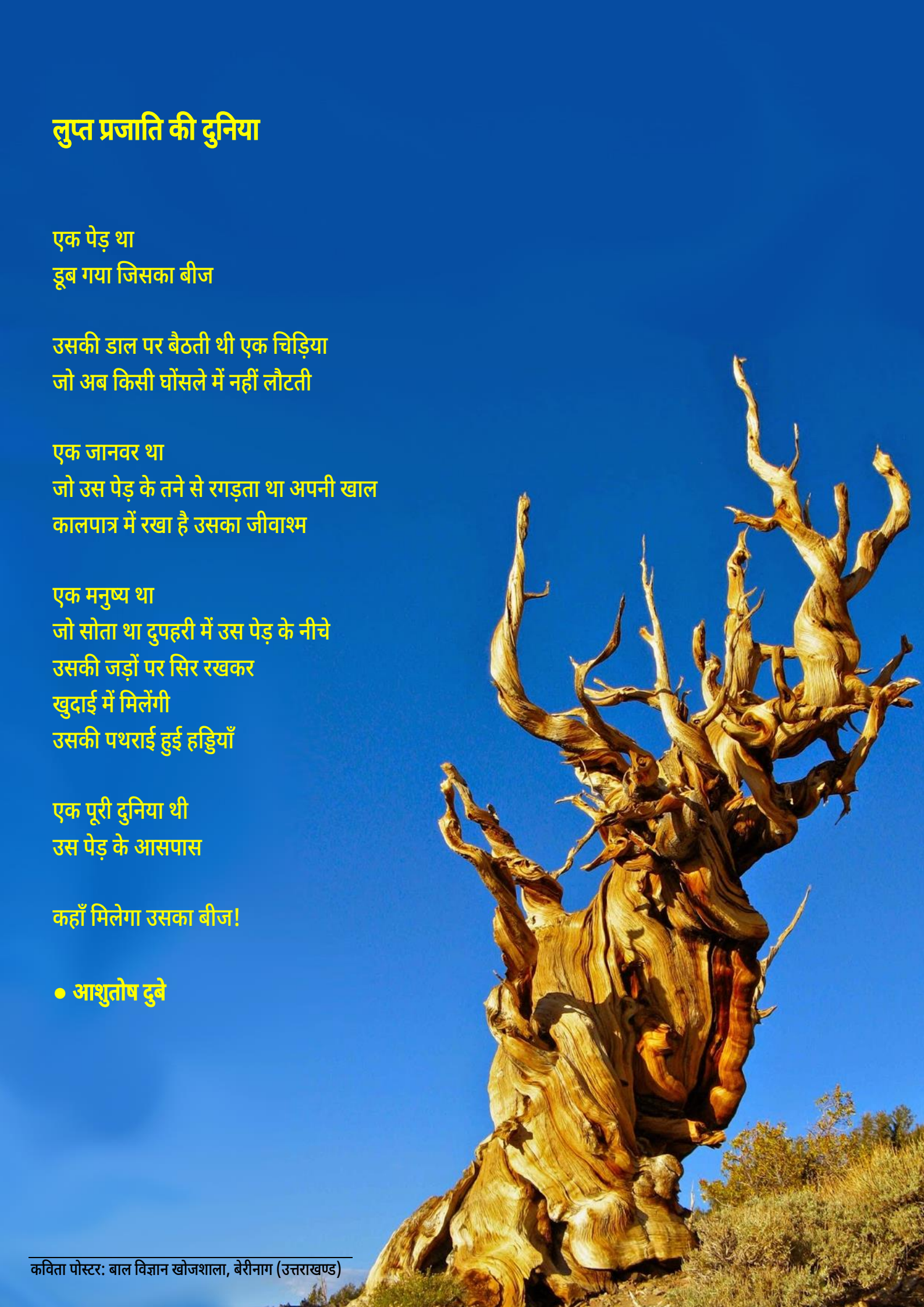

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

लेकिन...

दासों ने
विद्रोह किया
वो लड़े.....
वो हार गये
पकड़ लिये गये
उन्हें खम्बों पर लटकाया गया
वो धीरे धीरे मरे...
तो क्या विद्रोह असफल हो गया ...???

नहीं...
विद्रोह और प्रेम...
कभी असफल नहीं होते

जिस समय
वो मर रहे थे
उस समय
वो दास नहीं रह गये थे...

• मोहन मुक्त

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

वक़्त होता है

वक़्त होता है
जब पत्ता खड़कने का बहुत बड़ा अर्थ होता है
वरना ढोल पीटना व्यर्थ होता है

वक़्त होता है
जब नंगा होना धर्म होता है
और तब कपड़ों से बाहर आ जाने वाला नहीं
कपड़ों के भीतर घुसा रहने वाला
ज़्यादा बेशर्म होता है

वक़्त होता है
जब पत्थर का नहीं
पानी का स्पर्श भी बहुत सख़्त होता है और
जैसा वो बुज़ुर्ग कवि कह गया है
कि उस वक़्त जो आँख से टपकता है
वो पानी नहीं रक्त होता है

दोस्तो!
जिसे कुछ कर गुज़रना है
उसके लिए ऐसा वक़्त तो हर वक़्त होता है
वक़्त होता है...

• **नरेश सक्सेना**

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला समिति, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

वसीयत

मेरे बच्चो मेरी उँगली न पकड़ो
मेरी ऐनक से दुनिया को न देखो
मेरे नक़्शे क़दम पर ख़ाक डालो
मेरे रस्तों से रस्ता मत निकालो
मुहब्बत की अलग तफ़सीर लिखो
बुलंदी की नयी ताबीर लिखो
मेरी ख़्वाहिश है तुम ये कर दिखाओ
चलो रफ़्तार कुछ अपनी बढ़ाओ
पिछड़ने का बहाना चाहता हूँ
इसी में जीत पोशीदा है मेरी
मैं तुमसे हार जाना चाहता हूँ

● **इकबाल अशहर**

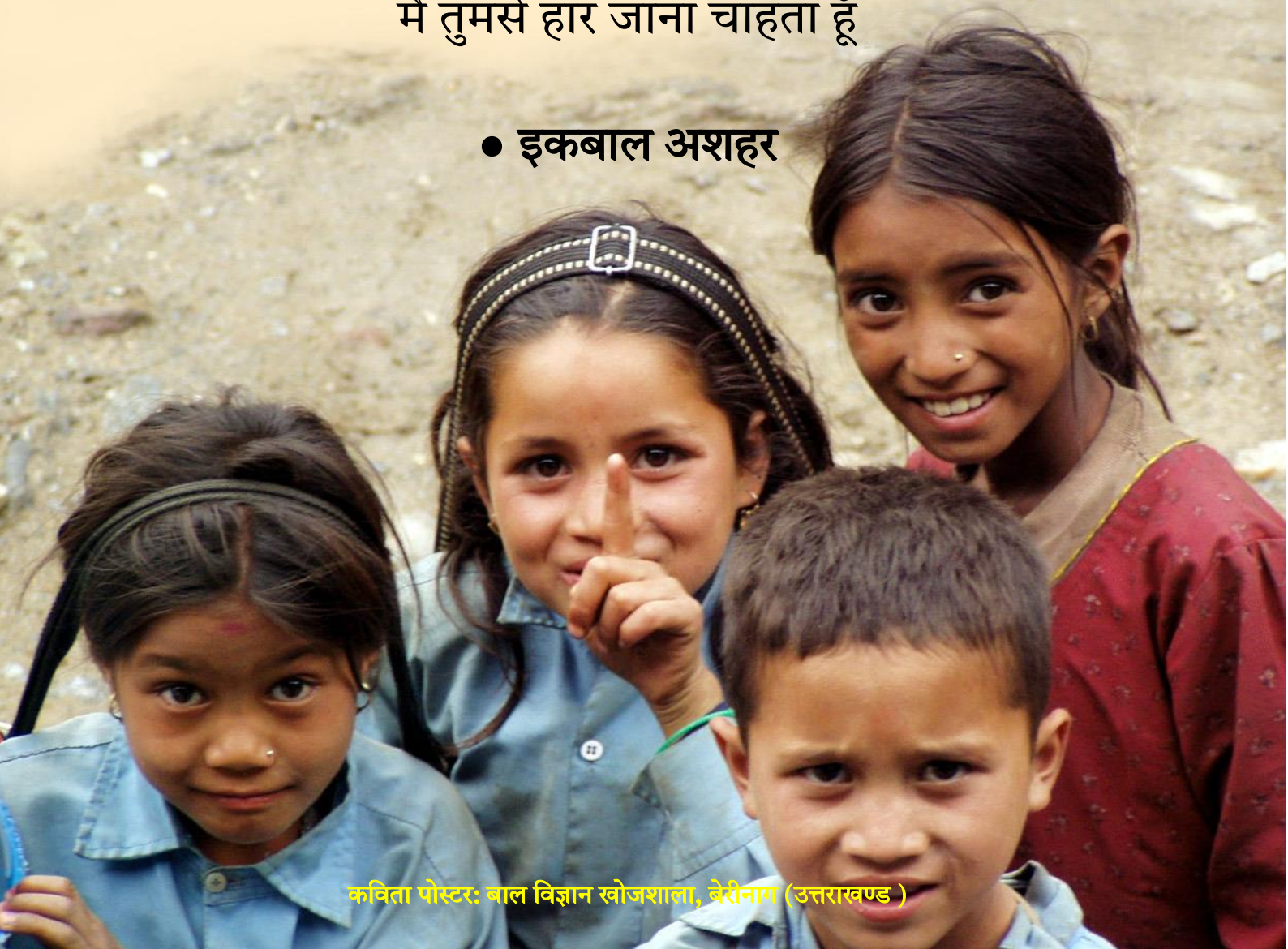

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

वि-गत

जब वह एक दिन
तमाम गहमागहमी के बीच
चुपचाप उठकर चला गया

पहले तो किसी को
पता ही नहीं चला
फिर किसी का ध्यान गया
और फिर किसी और का
और सबने कहा अभी-अभी तो यहीं था
पता नहीं कहाँ चला गया

जाने के लिए तैयार होने में
उसे एक उम्र लगी थी

पर उसे गया हुआ मान लेने में
कोई वक़्त नहीं लगा

• आशुतोष दुबे

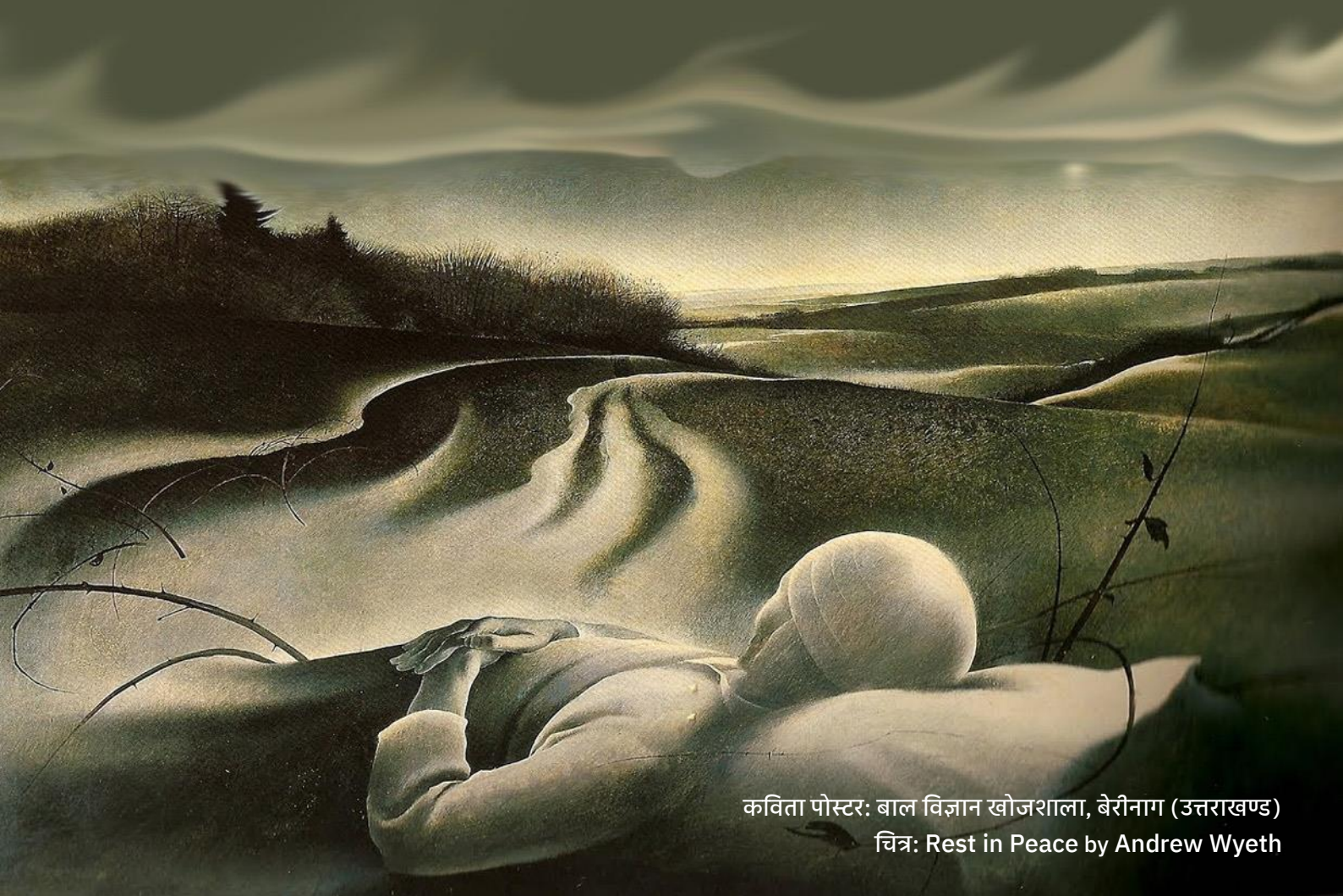

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)
चित्र: Rest in Peace by Andrew Wyeth

शक्ति के नियम

विजेताओं की विनम्रता
एक सुन्दर दृश्य बनाती है

विजय में विनय
जैसे कुछ भला भला सा अजूबा

जैसे अफ़सर का आपको देख कर मुस्कुरा देना
हाकिम का पहचान लेना
क़ामयाब व्यक्ति का एक बार में ही फ़ोन उठा लेना

यही उसके भलेपन और सहजता की
तमाम कहानियों की कुल जमापूँजी है

बाकी असरदार द्वारा किए जाने वाले अपमान का क्या है
वह तो इतना नियमित है
कि कुदरती है

अधीन को अपमानित न करना
शक्ति के नियमों के खिलाफ जाना है

● आशुतोष दुबे

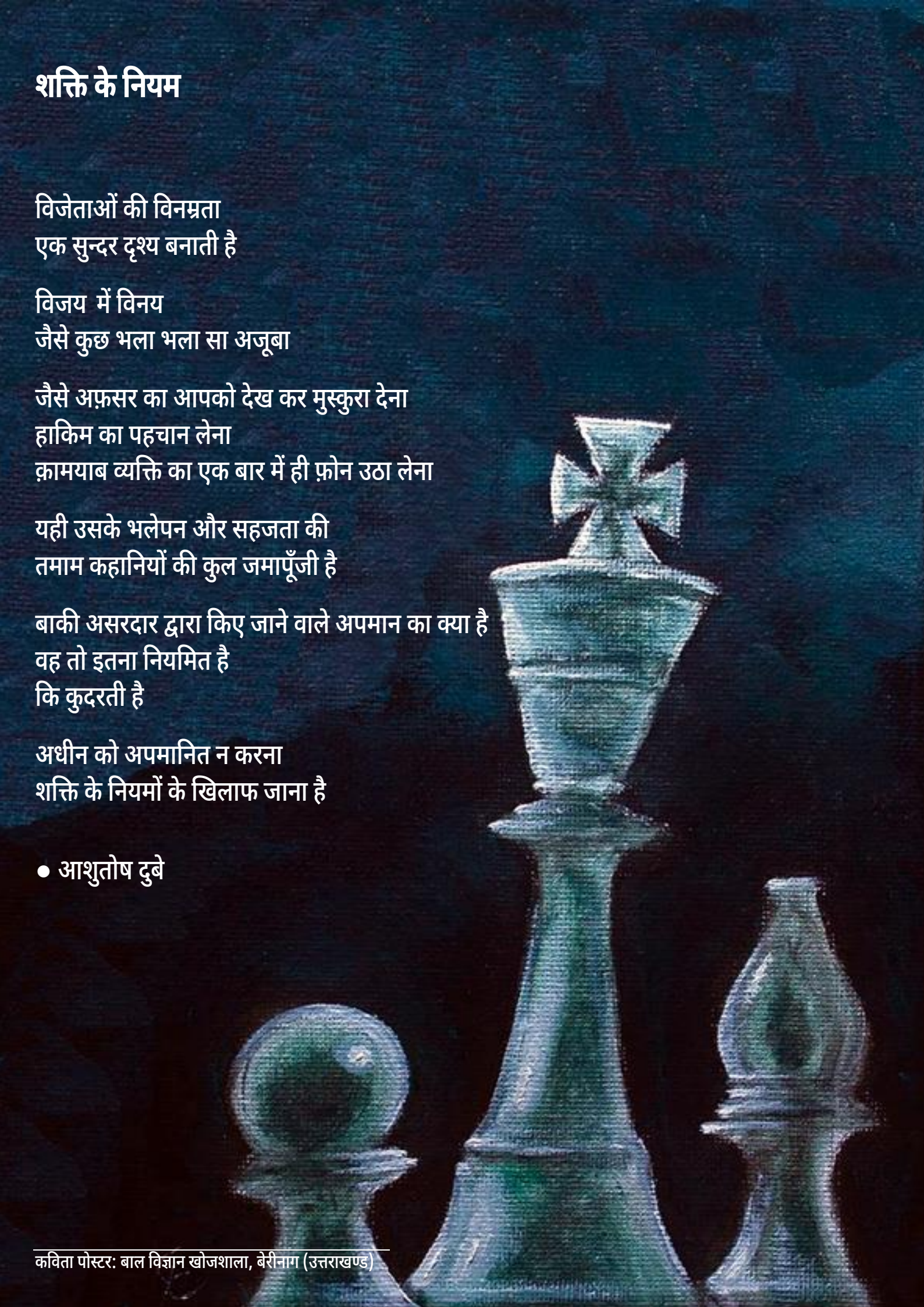

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

शुक्रिया

पेड़
सूर्य-किरणों का शुक्रिया अदा करते हैं
वे हवाओं का शुक्रिया अदा करते हैं
जिनसे उनकी साँसों का लेन-देन चलता रहता है

पेड़ धरती का शुक्रिया अदा करते हैं
पेड़ चिड़ियों का भी शुक्रिया अदा करते हैं
जो उनके बीजों के साथ उड़ान भरती हैं
और उन्हें महलों अटारियों की छतों, जंगलों
या खंडहरों के मलबों को सौंप आती हैं

क्या पेड़ मनुष्यों का भी शुक्रिया अदा करते होंगे?

• नरेश सक्सेना

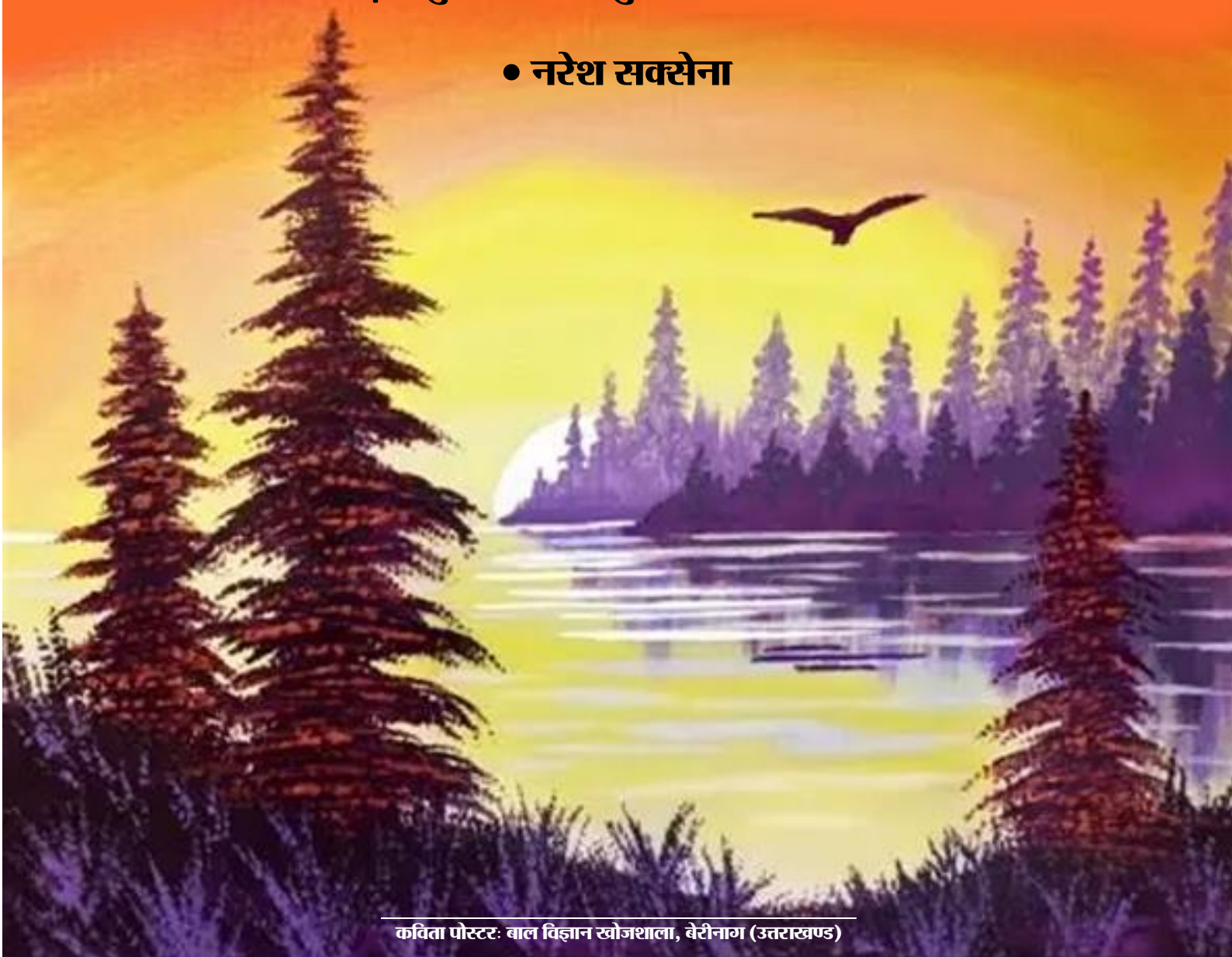

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

संभावित पुरुष

हर समय में संभावित पुरुष पैदा किए जाते हैं

शिक्षा और संस्कार ग्रहण करते हुए बच्चे
अक्सर व्यस्त दिखाई देते हैं–
पुरुष बनने के अभ्यासों में
अपनी उम्र भूल कर वे ताक़त का प्रयोग करते हैं

शासकों-सा अनुभव झलकता है उनके चेहरों पर
जबकि उन पर मासूमियत को होना था
उनका हठीला बालमन कुचलता रहता है
घर की औरतों के सम्मान को,
बच्चियों के उजले मन को

बच्चियाँ हर मौसम में उदास रहती हैं–
घरों में मुरझाई हुई बेलों की तरह
औरतें पालती ही रहती हैं संभावित पुरुषों को

शासक पुरुष सत्ता सुनिश्चित करते हैं–
पुरुष उत्तराधिकारियों के लिए

और बच्चे अभ्यासरत हैं– पूरी शिद्दत से,
अनजान और विस्मृति में डूबे हुए!

• **अनुराधा अनन्या**

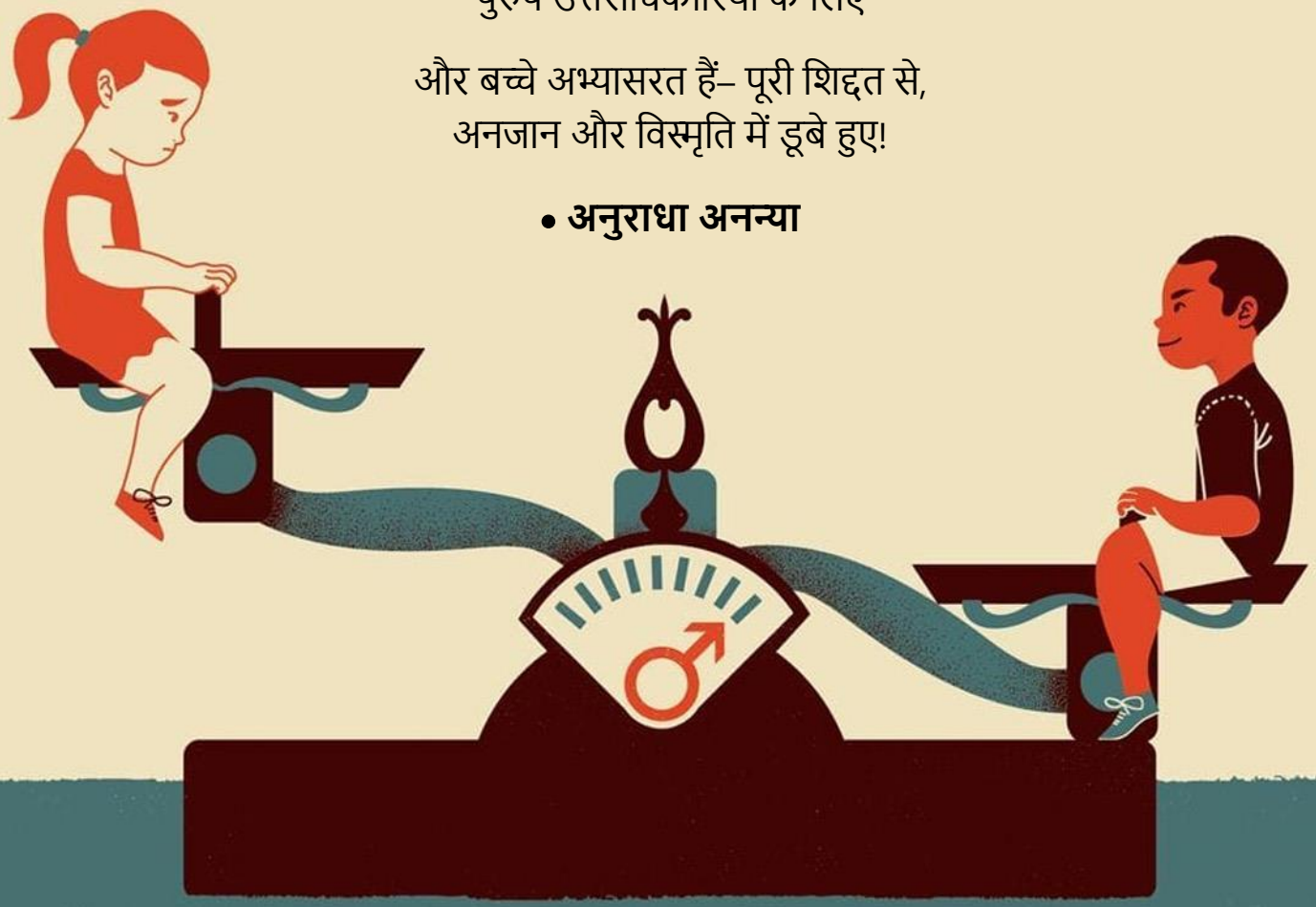

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

सुना है

ज़ेहरा निगाह

सुना है जंगलों का भी कोई दस्तूर होता है
सुना है शेर का जब पेट भर जाए तो वो हमला नहीं करता

दरख़्तों की घनी छाँव में जा कर लेट जाता है
हवा के तेज़ झोंके जब दरख़्तों को हिलाते हैं
तो मैना अपने बच्चे छोड़ कर
कव्वे के अंडों को परों से थाम लेती है
सुना है घोंसले से कोई बच्चा गिर पड़े तो सारा जंगल जाग जाता है

सुना है जब किसी नदी के पानी में
बए के घोंसले का गंदुमी रंग लरज़ता है
तो नदी की रुपहली मछलियाँ उस को पड़ोसन मान लेती हैं

कभी तूफ़ान आ जाए, कोई पुल टूट जाए तो
किसी लकड़ी के तख़्ते पर
गिलहरी, साँप, बकरी और चीता साथ होते हैं
सुना है जंगलों का भी कोई दस्तूर होता है

ख़ुदावंदा! जलील ओ मो'तबर! दाना ओ बीना! मुंसिफ़ ओ अकबर!
मिरे इस शहर में अब जंगलों ही का कोई क़ानून नाफ़िज़ कर!

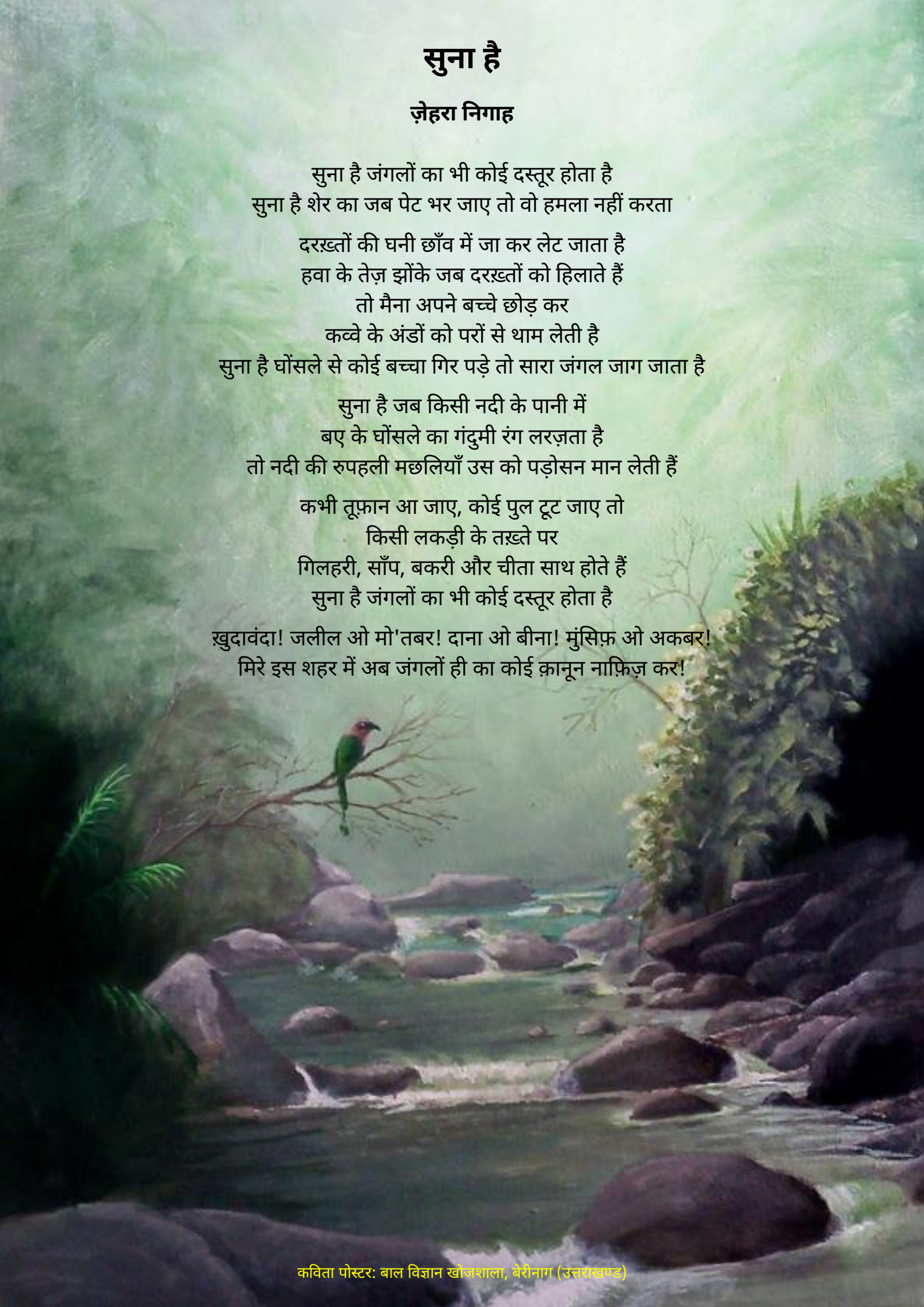

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

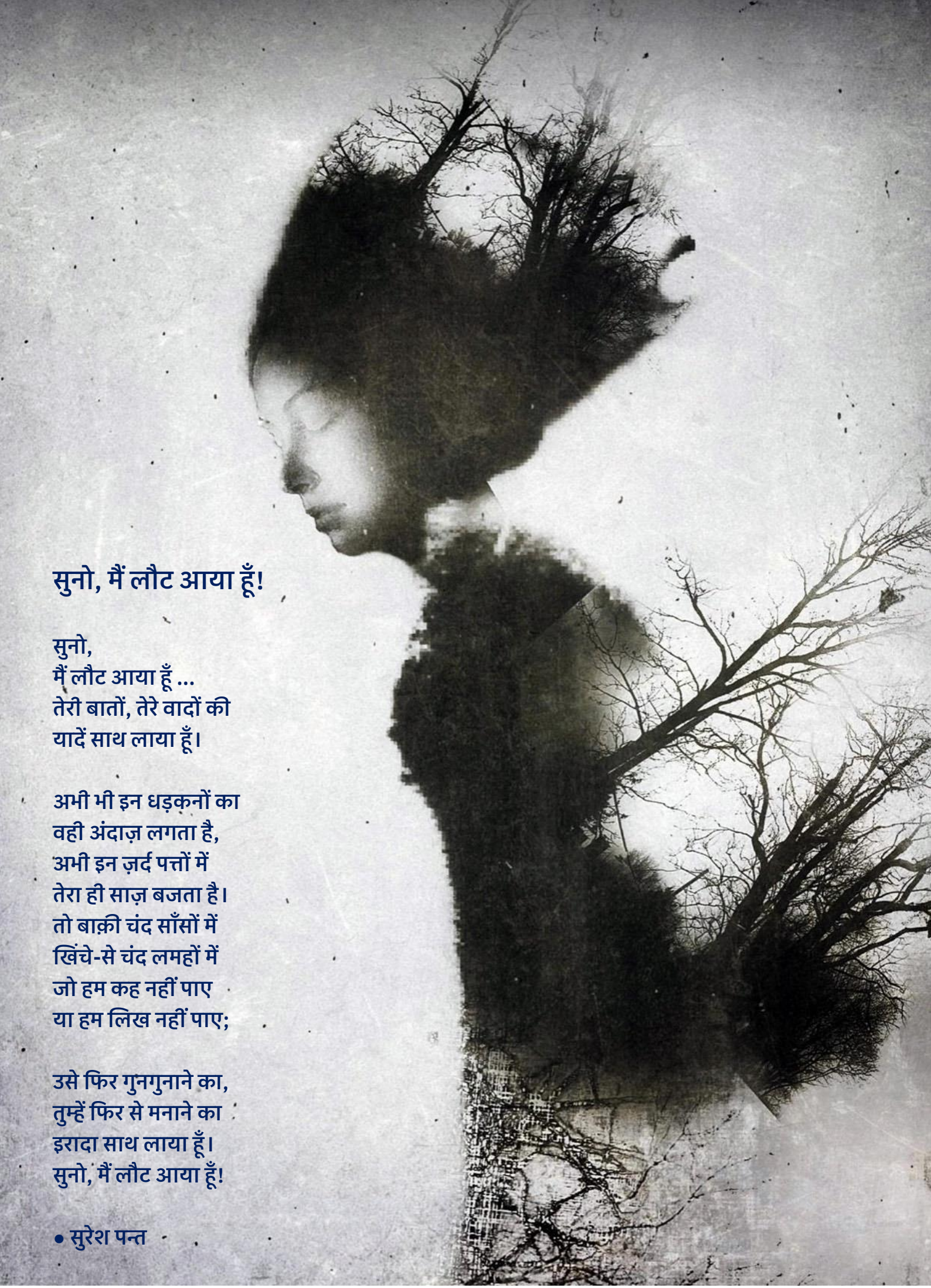

सुनो, मैं लौट आया हूँ!

सुनो,
मैं लौट आया हूँ ...
तेरी बातों, तेरे वादों की
यादें साथ लाया हूँ।

अभी भी इन धड़कनों का
वही अंदाज़ लगता है,
अभी इन ज़र्द पत्तों में
तेरा ही साज़ बजता है।
तो बाक़ी चंद साँसों में
खिंचे-से चंद लमहों में
जो हम कह नहीं पाए
या हम लिख नहीं पाए;

उसे फिर गुनगुनाने का,
तुम्हें फिर से मनाने का
इरादा साथ लाया हूँ।
सुनो, मैं लौट आया हूँ!

• सुरेश पन्त

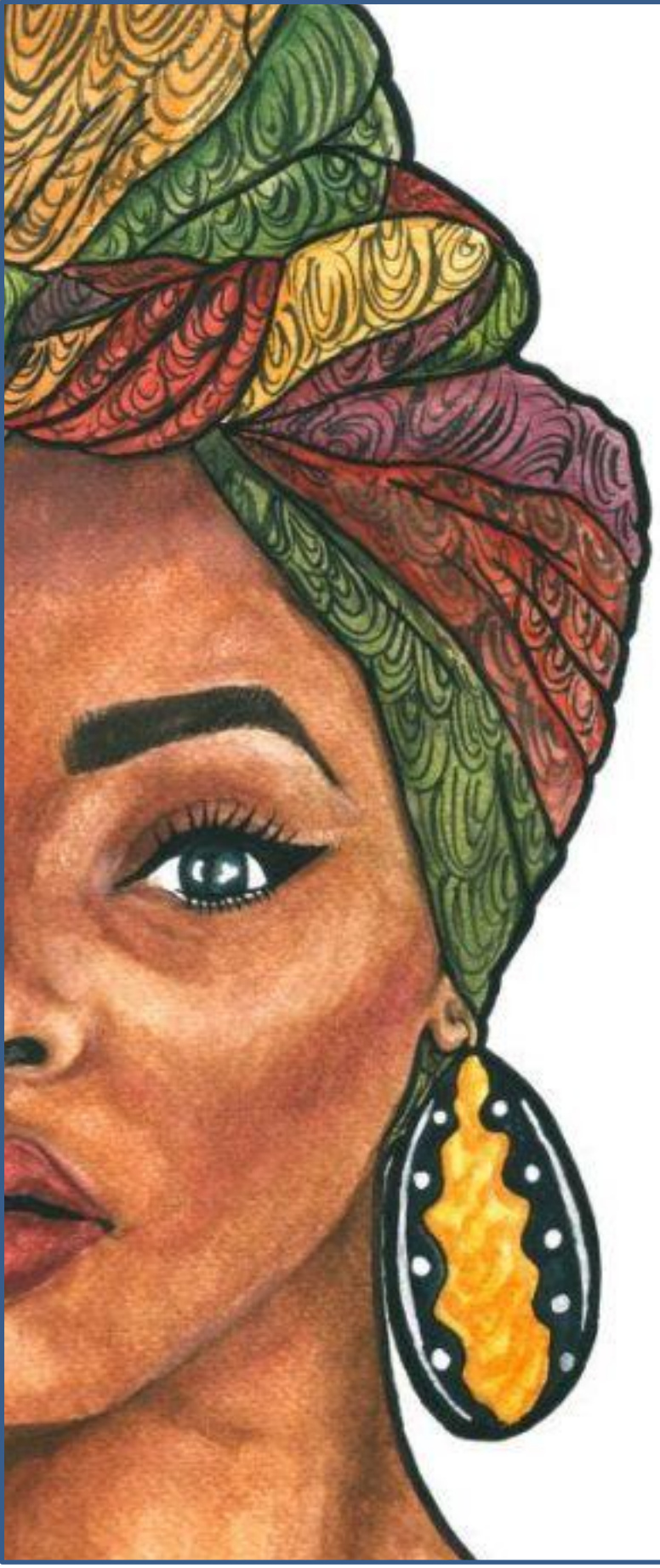

स्त्री का मन

बीमार बावरी से डॉक्टर ने कहा-
जीभ दिखाओ
बावरी के फीके होंठ मुस्कराये-
जीभ तो थूक है
स्त्री अपना मन दिखाना चाहती है
और मन कोई देखता नहीं
बावरी की आँखें नम हो गयीं
डॉक्टर पत्थर हो गया

मुझे लगा-
हर नदी का उद्गम स्त्री का मन है
और हर नदी को अपना रास्ता
पत्थरों के बीच से बनाना होता है।

● हरभगवान चावला

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखंड)

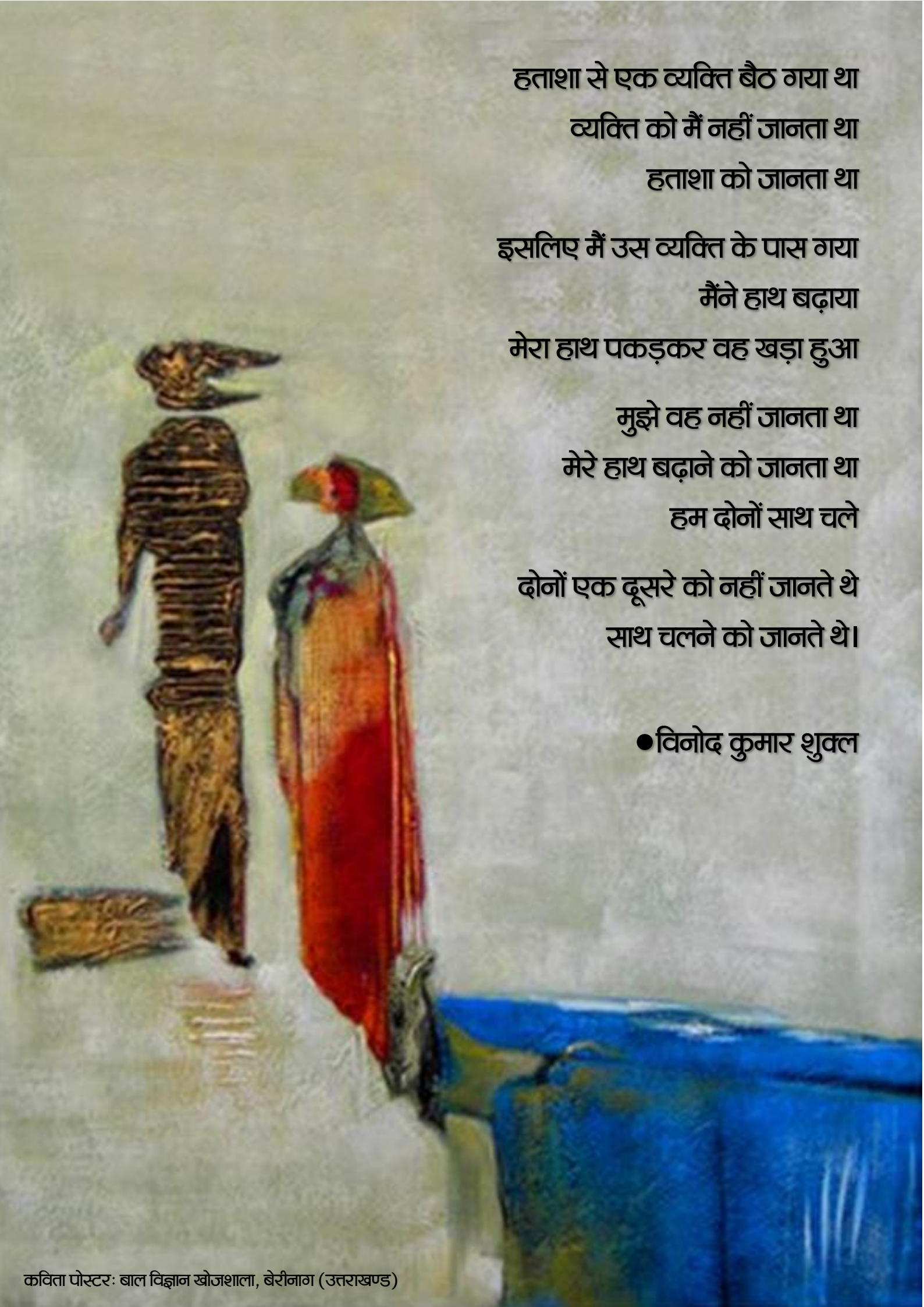

हताशा से एक व्यक्ति बैठ गया था
व्यक्ति को मैं नहीं जानता था
हताशा को जानता था

इसलिए मैं उस व्यक्ति के पास गया
मैंने हाथ बढ़ाया
मेरा हाथ पकड़कर वह खड़ा हुआ

मुझे वह नहीं जानता था
मेरे हाथ बढ़ाने को जानता था
हम दोनों साथ चले

दोनों एक दूसरे को नहीं जानते थे
साथ चलने को जानते थे।

●विनोद कुमार शुक्ल

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखण्ड)

हम नदी के किनारे
पहाड़ों को देखते बड़े हुए थे
हम अपनी-अपनी नदी
और अपने-अपने पहाड़ से
ख़ूब बातें करते थे,
हम पेड़ों के तने से कान लगाकर
पंछियों का सोना सुनते थे
उनकी नींद में खलल न पड़े
इसलिए कभी-कभी बादलों को डांटा करते थे।

● राही डूमरचीर

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखंड)

हम सब एक दिन मारे जायेंगे
आस्तिक नास्तिक सब

आस्तिक किसी को नास्तिक कहकर
प्रेमियों को समाज मार डालेगा
समाज को परस्पर घृणा
बच्चों को वहशी मार डालेंगे
स्त्रियों को बलात्कारी
और हमें हमारी नींद मार डालेगी

इससे पहले
हम नींद में ही मर जाएं
आओ जाग जाएं!
आओ जाग जाएं!

● कल्पना त्रिपाठी पन्त

कविता पोस्टर: बाल विज्ञान खोजशाला, बेरीनाग (उत्तराखंड)

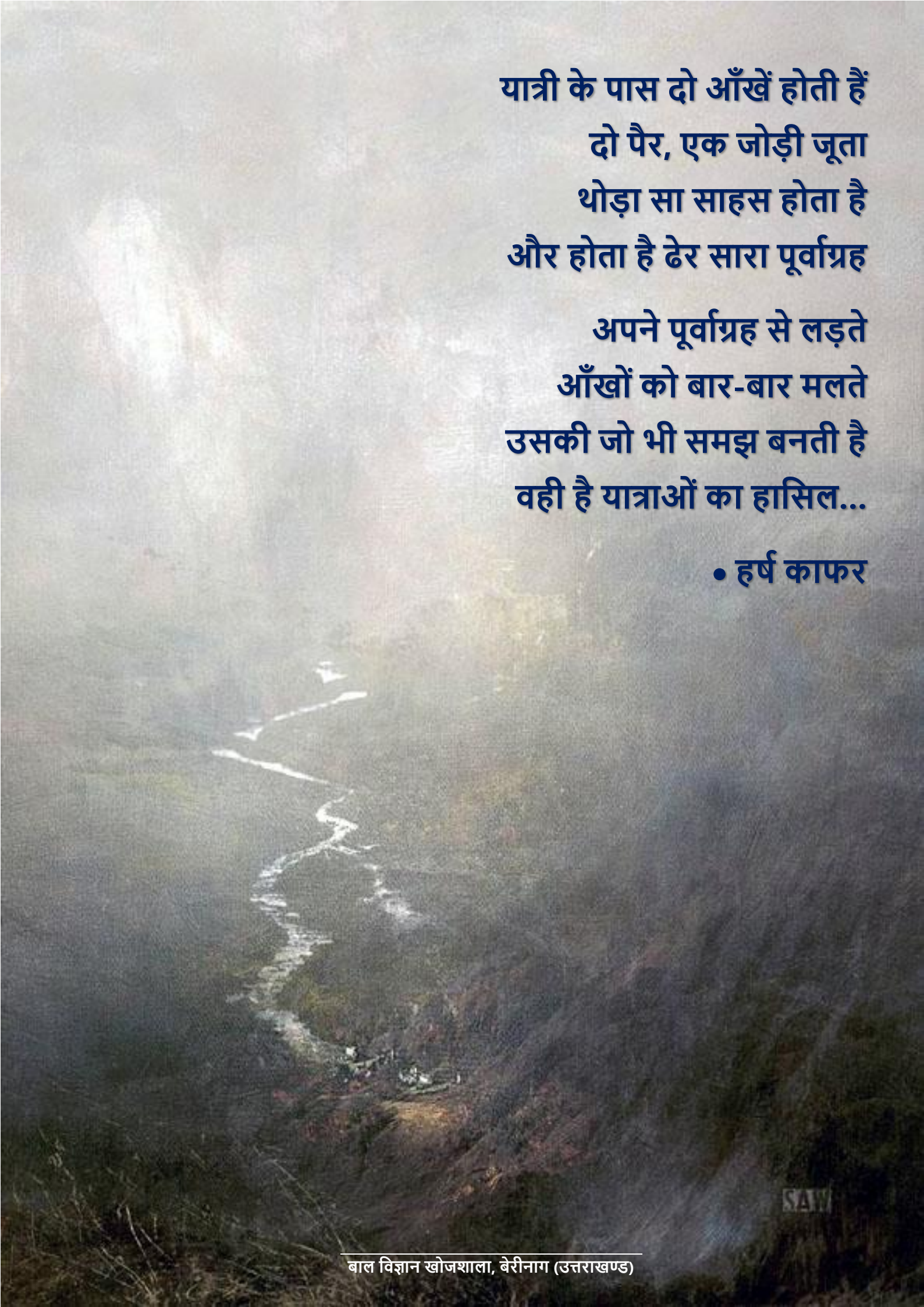

यात्री के पास दो आँखें होती हैं
दो पैर, एक जोड़ी जूता
थोड़ा सा साहस होता है
और होता है ढेर सारा पूर्वाग्रह

अपने पूर्वाग्रह से लड़ते
आँखों को बार-बार मलते
उसकी जो भी समझ बनती है
वही है यात्राओं का हासिल...

• हर्ष काफर